हिन्दी और अंग्रेज़ी अनुवाद सहित

With Hindi and English Translation

अनुवादक

सत्यव्रत शास्त्री

Translator

Satya Vrat Shastri

चाणक्यनीतिः

चाणक्यनीतिः

CĀṆAKYANĪTI

हिन्दी और अंग्रेज़ी अनुवाद सहित

With Hindi and English Translation

अनुवादक

सत्यव्रत शास्त्री

अभ्यर्हित आचार्य, विशिष्ट संस्कृत अध्ययन केन्द्र
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

पूर्व आचार्य एवम् अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

पूर्व कुलपति, श्री जगन्नाथ संस्कृत विश्वविद्यालय, पुरी, ओडिशा

Translator

Satya Vrat Shastri

Honorary Professor, Special Centre for Sanskrit Studies
Jawaharlal Nehru University
Formerly Professor and Head, Department of Sanskrit
University of Delhi
Ex-Vice-Chancellor
Shri Jagannath Sanskrit University, Puri (Orissa)

भारतीय विद्या मन्दिर, कोलकाता

BHARATIYA VIDYA MANDIR, KOLKATA

चाणक्यनीतिः

CĀṆAKYANĪTI

हिन्दी और अंग्रेज़ी अनुवाद सहित

With Hindi and English Translation

अनुवादक

सत्यव्रत शास्त्री

अभ्यर्हित आचार्य, विशिष्ट संस्कृत अध्ययन केन्द्र
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
पूर्व आचार्य एवम् अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय
पूर्व कुलपति, श्री जगन्नाथ संस्कृत विश्वविद्यालय, पुरी, ओडिशा

Translator

Satya Vrat Shastri

Honorary Professor, Special Centre for Sanskrit Studies
Jawaharlal Nehru University
Formerly Professor and Head, Department of Sanskrit
University of Delhi
Ex-Vice-Chancellor
Shri Jagannath Sanskrit University, Puri (Orissa)

भारतीय विद्या मन्दिर, कोलकाता

BHARATIYA VIDYA MANDIR, KOLKATA

प्रकाशक
भारतीय विद्या मंदिर
12/1 नेली सेनगुप्ता सरणि
कोलकाता-700087

सी-248 डिफैंस कॉलोनी, नई दिल्ली-110024
मो. 9650117463

प्रथम संस्करण : 2013

ISBN : 978-81-89302-42-9

मूल्य : ₹ 295

मुद्रक : विकास कम्प्यूटर एंड प्रिंटर्स
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

अनुक्रम

प्रकाशकीय

भारतीय इतिहास में वासुदेव कृष्ण के पश्चात् सर्वाधिक प्रभावशाली नीतिज्ञ ईस्वी पूर्व चौथी शताब्दी में तक्षशिला विश्वविद्यालय के आचार्य विष्णुगुप्त (चाणक्य) हुए जिन्होंने अपनी नीति के बल पर मगध की दुराचारी नंद वंशीय सत्ता को समाप्त कर अपने साधनहीन शिष्य चन्द्रगुप्त मौर्य को मगध का अधिपति उसी तरह बना दिया जिस तरह श्रीकृष्ण ने अपनी नीति के बल पर शक्तिशाली दुराचारी कौरवों को समाप्त कर विपन्न पाण्डवों को हस्तिनापुर का अधिपति बना दिया था। कितने ही गणतंत्रों व राजतंत्रों को एक कर भारत भूमि को एक राष्ट्र के रूप में संगठित करने के प्रयास में वे लगे रहे। आचार्य चाणक्य ने अपने अनुभवों, विचारों व सिद्धान्तों को सूत्र बद्ध किया जो 'चाणक्यनीति' के नाम से प्रसिद्ध हुए। इस नीति ग्रंथ में परिस्थितियों, व्यवहारों व आचरणों को लेकर जो गहन चिंतन परक निर्देश दिए गए हैं वे आज भी इतने व्यावहारिक और उपयोगी हैं कि उनके अनुसार प्रयासरत होकर व्यक्ति अपने जीवन में बड़े लक्ष्यों को प्राप्त कर सफल बन सकता है। इस तरह देखें तो यह 'चाणक्यनीति' अपने आप में प्रबंधन शास्त्र है। इस संस्कृत ग्रंथ की इस महती उपयोगिता को देखकर ही मैंने आदरणीय शिखरस्थ विद्वान्, संस्कृत जगत् के भीष्म पितामह, प्रो. सत्यव्रत शास्त्री से इसका सम्पूर्ण रूप से हिन्दी व अंग्रेज़ी में अनुवाद करने का निवेदन किया, जब उन्होंने मुझे बताया कि उन्होंने इसके बीच-बीच के अंशों का अनुवाद कर रखा है। उन्होंने तत्काल मेरे निवेदन को स्वीकार किया और अपनी अतुलनीय शैली में इसके छूटे हुए अंशों का भी अनुवाद कर डाला। इसकी विस्तृत भूमिका भी उन्होंने लिखी जो अपनी विद्वत्ता, गंभीरता तथा प्रवाहमय शैली के कारण विलक्षण है। अनुवाद को जितना भी उत्कृष्ट बनाया जा सकता था उतना उत्कृष्ट बनाने के लिए उन्होंने कठोर प्रयास किया जैसा कि इस कृति की भूमिका में दिये गए उन उदाहरणों से स्पष्ट है जिनका सही-सही अनुवाद आसान नहीं था, वह अनुवाद जिसमें मूल के भाव की सही पकड़ हो। संस्कृत के

एक शब्द के अनेक प्रकरणों में सही समानान्तर शब्द की खोज के दौरान अनेक विकल्प उनके सामने आए। उनमें से जो उन्हें सही लगा उसका उन्होंने चयन किया जिसमें उन्हें बहुत प्रयास करना पड़ा। यह प्रयास उनकी सावधानी और परिशुद्धता के प्रति आग्रह का प्रतीक है। इस सबके लिए मैं उनका हृदय से आभारी हूँ। मुझे प्रसन्नता है कि भारतीय विद्या मन्दिर इस महत्त्वपूर्ण कृति को प्रकाशित कर रहा है हिन्दी और अंग्रेज़ी अनुवाद तथा विस्तृत भूमिका के साथ जो कि इसके भारतीय मनीषा और संस्कृति के जन-जन में प्रचार-प्रसार के लक्ष्य के अनुरूप है। मुझे पूर्ण आशा है कि जन-जन में इसका स्वागत होगा। इससे भारतीय विद्या मन्दिर को इस प्रकार के अन्य कार्यों को करने की और अधिक प्रेरणा मिलेगी।

सिम्पलेक्स हाउस
27, शेक्सपीयर सरणि
कोलकाता-700 017

बिट्ठलदास मूंधड़ा
अध्यक्ष
भारतीय विद्या मंदिर

The Publisher's Note

The most influential politician in Indian history after Vāsudeva Kṛṣṇa was Cāṇakya, a member of the faculty of the University of Takṣaśilā who with the sheer force of his clever moves extirpated the Nanda dynasty of ill-repute and installed on the Magadha throne his pupil Candragupta Maurya of no resources as did Kṛṣṇa the distressed Pāṇḍavas on the throne of Hastināpura after destroying the all powerful wicked Kauravas with his astute diplomatic moves. He continued his efforts in bringing together the large number of republics and monarchies to carve out of them a united India. He put down his experiences, thoughts and principles in the form of a work that came to be known after him. The work gives directions pregnant with deeper thought that on account of their utility and practicality have relevance even today. These directions pertain to situations, activities and ways of life. By following these one can achieve high goals. Viewed in this light the *Cāṇakyanīti* represents in itself as a text on management. In view of the importance of this work, I requested the eminent savant, the respected Bhīṣma Pitāmaha of the Sanskrit world, Padma Bhushan Prof. Satya Vrat Shastri to translate it in Hindi and English in its entirety when he told me that he had done so way back in bits and pieces. He readily agreed to my request and translated what was left of it in his inimitable style. He also appended to it a learned introduction remarkable for its profundity, depth and flow of style. He worked hard to make his translation as perfect as possible as can be seen from the instances of the Sanskrit words that did not admit easy translation, the translation that would catch the spirit of the original. He had to strive hard to choose the right equivalent of a Sanskrit word in a particular context from out of so many

that suggested themselves to him. The effort that he put in for this is a testimony to his spirit of total dedication to precision and rectitude. For all this I owe him a deep sense of gratitude. I am happy that the Bharatiya Vidya Mandir is bringing out this important work in Hindi and English translation with a detailed introduction in consonance with its mission of propagating ancient Indian wisdom and culture for the public at large. I have every hope that it will meet with its appreciation. That will provide further incentive to the Bharatiya Vidya Mandir to continue undertaking similar activities.

Bithal Das Mundhra
Chairman
Bharatiya Vidya Mandir

Simplex House,
27, Shakespeare Sarani,
Kolkata-700 017

प्रारम्भिक वक्तव्य

महाकवि कालिदास ने अपने विश्वप्रसिद्ध नाटक अभिज्ञानशाकुन्तल का प्रारम्भ शिकार के लिये महाराज दुष्यन्त का वन में एक हिरण का पीछा करने से किया है। हिरण प्राण बचाने के लिये भागता जाता है। जैसे ही वह महाराज की पकड़ में आने को होता है और वे उसे मारने के लिये बाण छोड़ने को ही होते हैं कि तपस्वी बीच में आ जाते हैं। यह आश्रम का हिरण है, इसे मत मारो, यह वे कहते हैं। कण्वाश्रम में आने का निमन्त्रण भी वे उन्हें देते हैं। जैसे ही महाराज आश्रम में प्रवेश करने को होते हैं उनकी दाहिनी बांह फड़कने लगती है। इसे देख वे कह उठते हैं—

> शान्तमिदमाश्रमपदं स्फुरति च बाहुः कुतः फलमिहास्य।
> अथवा भवितव्यानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र।।

"यह आश्रम–स्थल शान्त है फिर भी बांह फड़क रही है। अथवा जो होनी है उसके द्वार, मार्ग, सब जगह हैं।"

वर्तमान अनुवाद कालिदास की पंक्ति 'भवितव्यानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र' का प्रत्यक्ष उदाहरण है। चाणक्यनीति का अनुवाद करने की मेरी कोई योजना नहीं थी। मई, २०१२ के अन्तिम दिनों की बात है। मैं एक महत्त्वपूर्ण कागज खोज रहा था। अनेक फाइलें उसके लिये मैंने उलटी–पलटीं। वह कागज तो नहीं मिला पर एक फाइल में कागजों का एक पुलिन्दा मेरे हाथ लगा। उसमें चाणक्यनीति के कुछ पद्यों का हिन्दी और अंग्रेज़ी में अनुवाद था–क्रम वार नहीं, बीच–बीच से। कब अनुवाद किया, किस कारण किया, बीच--बीच के पद्यों का ही क्यों किया, इसके बारे में मुझे कुछ भी स्मरण नहीं था। तब मेरे मन में विचार आया कि क्यों न बीच में छूटे हुए पद्यों का भी अनुवाद कर लिया जाये। लगभग ३० प्रतिशत कार्य तो मैंने किया ही हुआ है, ७० प्रतिशत और कर दूं तो सम्पूर्ण ग्रन्थ का ही अनुवाद हो जायेगा। इससे जो ३० प्रतिशत कार्य मैंने कर रखा है उसका उपयोग भी हो जायेगा और वह ग्रन्थ रूप में आने पर सुरक्षित भी हो जायेगा। अन्यथा वह कदाचित् फाइल में

ही पड़ा रह जाये और लुप्त हो जाये जिस कारण जितना भी मेरा थोड़ा–बहुत परिश्रम किया हुआ है वह व्यर्थ ही चला जाये। यह सोच मैं तत्परता से इसके छूटे हुए अंशों के अनुवाद में जुट गया। जून समाप्त होते–होते मैंने यह कार्य पूरा कर लिया।

अनेक विधाओं के अनेक ग्रन्थों के अनुवाद ने मुझे सिखा दिया था कि अनुवाद का कार्य आसान नहीं। मूल के भाव को जस का तस प्रस्तुत करना उसका एक पक्ष है। जिस भाषा में उसे प्रस्तुत करना है उसके स्वरूप और स्वारस्य को भी ध्यान में रखना उसका एक दूसरा पक्ष है। मैंने अनुवाद में दोनों ही पक्षों पर ध्यान देने का प्रयास किया है। अनुवाद होने पर भी जो अनुवाद की प्रतीति न दे, वही श्रेष्ठ अनुवाद है। यह मेरी मान्यता रही है। इसी मान्यता को मूर्त रूप देने का प्रयास जीवन भर मेरा रहा है। ७० प्रतिशत अनुवाद कार्य मात्र पच्चीस दिनों में– अनेक अन्य कार्यों के होते हुए भी– पूर्ण हो सकता है। इससे स्पष्ट है कि कलम जब चलने लगती है तो शब्दमेघ स्वतः उमड़ने–घुमड़ने लगते हैं। तब अनुवाद मात्र एक शिल्प न रहकर कला बन जाता है।

अनुवाद की कठिनाई उन भाषाओं के सन्दर्भ में और भी अधिक है जो हिन्दी आदि की तरह संस्कृत से अनुप्राणित नहीं हैं। अंग्रेज़ी उनमें से एक है। चूंकि वह भी अंतरराष्ट्रिय भाषा होने के कारण अन्तरराष्ट्रिय जगत् में प्रस्तुत कृति की जानकारी हेतु हिन्दी के साथ अनुवाद का माध्यम बनाई गई है, अतः अनेक संस्कृत शब्दों के सही अनुवाद में कठिनाइयों का आना अस्वाभाविक नहीं था। ये कठिनाइयां अनेक सामान्यातिसामान्य शब्दों के विषय में भी अनुभव की गईं। अपुत्रस्य गृहं शून्यम् में जहां शून्यम् का अनुवाद हिन्दी में सूना करके काम चला लिया वहां इसके लियें अंग्रेज़ी में उपयुक्त शब्द ढूंढने की आवश्यकता पड़ी। अनेक विकल्प सामने आये– empty, desolate आदि। अन्त में barren शब्द ही सबसे उपयुक्त लगा। इसी प्रकार त्यजेदेकं कुलस्यार्थे में जहां त्यजेत् का हिन्दी अनुवाद 'छोड़ दे' के रूप में किया जा सकता है वहां अंग्रेज़ी में give up, renounce आदि अनेक विकल्प सामने आये पर वे जंचे नहीं। तब एक शब्द सुझाई दिया, वह था surrender. यही शब्द

एक दूसरे प्रकरण में सही नहीं जंचा। संस्कृत में वहां भी त्यजेत् शब्द ही है— अल्पविद्यं गुरुं त्यजेत्, यहां त्यजेत् के लिये surrender शब्द नहीं चल सकता। या तो avoid शब्द का यहां प्रयोग करना होगा या keep distance from का। दोष संस्कृत का एक ऐसा शब्द है जिसका भिन्न प्रकरणों में भिन्न भिन्न अर्थ है, कहीं कमी, कहीं अपराध, कहीं बुराई, कहीं दुर्गुण। पत्रं नैव यदा करीरविटपे दोषो वसन्तस्य किम् में इसका अनुवाद हिन्दी में अपराध और अंग्रेज़ी में fault के रूप में करना होगा— करीर की टहनी में यदि पत्ता भी नहीं उगता तो इसमें वसन्त का अपराध है क्या, if even a leaf does not grow on the Karīra branch, does it mean that the spring is at fault? अनेक बार वाक्य के भाव को अभिव्यक्त करने के लिये अनुवादक को अपनी ओर से शब्द लगाने पड़ते हैं। उपरिनिर्दिष्ट सन्दर्भ में संस्कृत में केवल नैव ही कहा गया है जिसका अर्थ नहीं या सर्वथा नहीं है। यह अपने में अपूर्ण है। इसके साथ होता या उगता शब्द लगाने से ही वाक्य पूर्ण होगा। अनृतं साहसं माया मूर्खत्वमतिलुब्धता, अशौचत्वं निर्दयत्वं स्त्रीणां दोषाः स्वभावजाः में दोष शब्द का अनुवाद हिन्दी में दुर्गुण और अंग्रेज़ी में bad traits करना होगा। झूठ बोलना आदि दुर्गुण स्त्रियों में स्वभाव से ही होते हैं, to speak untruth etc. are bad traits in women that go with their nature. लालनाद् बहवो दोषास्ताडनाद् बहवो गुणाः में दोषाः का अर्थ हिन्दी में बुराइयां और अंग्रेज़ी में evils करना होगा— लाड लड़ाना अनेक बुराइयों का कारण है, pampering is the source of many an evil. कस्य दोषः कुले नास्ति में दोष का अर्थ खोट है, ऐसा कौन है जिसके कुल में (वंश में या परिवार में, कुल से दोनों लिये जा सकते हैं) में कोई खोट नहीं, who is there in whose family there is no loophole? अंग्रेज़ी में दोष का अनुवाद loophole से करना सर्वोत्तम लगता है, कमी, defect, shortcoming आदि शब्द यहां अधिक जंचते नहीं। यही दोष शब्द एको गुणः खलु निहन्ति समस्तदोषान् में कमी, shortcoming इस अर्थ को द्योतित करता है। केवल एक गुण समस्त कमियों को दूर कर देता है (समस्त कमियों पर भारी पड़ता है), even one quality covers up all shortcomings.

हतः शब्द का सामान्यतया अर्थ मरा हुआ होता है। पर हतो यज्ञस्त्वदक्षिणः में इसका अनुवाद एक अन्य प्रकार से करना होगा। बिना दक्षिणा के यज्ञ मर जाता है यह अनुवाद अक्षरानुवाद तो है पर इसमें स्वारस्य नहीं है। हतः को यहां हिन्दी में निष्फल शब्द से कहना होगा और अंग्रेज़ी में waste या futile से। हिन्दी–दक्षिणा के बिना यज्ञ निष्फल है, अर्थात् किया न किया एक बराबर है। अंग्रेज़ी– a sacrifice without fee is just waste, as good as not performed. यही हतः शब्द धर्म एव हतो हन्ति में न पालन करने के अर्थ में है– धर्म का जब नहीं पालन किया जाता तो वह मार देता है, Dharma when not observed, kills. धर्म का न पालन करना ही धर्म को मारना है। इसी 'हत' का जब क्षेत्र के साथ प्रयोग किया जाता है– अल्पबीजं हतं क्षेत्रम्– तो इसका अर्थ होता है काम लायक न रहना, जिस खेत में कम बीज डाले जाते हैं वह किसी काम का नहीं, a field with a small amount of seeds serves no purpose. इसी पद्य में जहां उपर्युद्धृत पंक्ति है विद्या और स्त्रियों का भी उल्लेख है। यद्यपि विद्या के साथ यहां हता का प्रयोग नहीं एवञ्च स्त्रियों के साथ हताः का नहीं तो भी उत्तरार्ध में हतं का प्रयोग होने से पद्यस्वारस्य उन्हीं की ओर इंगित करता है। आलस्योपहता विद्या में हता का तथा परहस्तगताः स्त्रियः में हताः का अध्याहार करना होगा तभी कथ्य पूरा हो सकेगा। आलस्योपहता विद्या (हता) का अर्थ होगा कि आलस्य से आक्रान्त (उपहता=आक्रान्त, दबोची गई) विद्या चली जाती है (=नष्ट हो जाती है) (हता), knowledge under the grip of indolence goes away, परहस्तगताः स्त्रियः [हताः] = दूसरे के हाथ में पड़ी स्त्रियां काम की नहीं रहतीं, women fallen in the hands of others are of no use. वज्रेणापि हताः पतन्ति गिरयः में हताः का अर्थ हिन्दी में गिरना और अंग्रेज़ी में struck करना होगा– गाज गिरने से पहाड़ भी ढह जाते हैं, when struck with thunderbolt even mountains fall flat. हतं ज्ञानं क्रियाहीनं में हत के लिए अर्थ हिन्दी में निरर्थक शब्द उपयुक्त है और अंग्रेज़ी में of no value. इसी प्रकार हतश्चाज्ञानतो नरः में हिन्दी में अनुवाद करना होगा कुछ रहता नहीं और अंग्रेज़ी में is as good as dead.

हतं निर्णायकं सैन्यं में हतं के लिए उपयुक्त शब्द होगा बेसहारा और अंग्रेज़ी में helpless.

संस्कृत के अनेक शब्द ऐसे हैं जिनका अनुवाद करना अत्यन्त कठिन है। उपर्युक्त धर्म शब्द उनमें से एक है। हिन्दी में तो धर्म शब्द सुप्रचलित होने के कारण चल जाता है। अंग्रेज़ी में righteousness आदि शब्द इसकी सम्पूर्ण भावभूमि को पकड़ने में असमर्थ हैं। इसलिये उसमें भी इन्हीं शब्दों को रहने दिया जाता है। धर्म की कोटि का ही शील शब्द भी है– शीलं परं भूषणम्। Good conduct आदि शब्द इसमें अन्तर्निहित भावों की समग्रता को उद्घाटित करने में असमर्थ हैं। इसी कोटि का एक अन्य शब्द कर्म या कर्मन् इसी रूप में अंग्रेज़ी में भी अपना लिया गया है : theory of karman, कर्मसिद्धांत। प्रस्तुत कृति के शीर्षक के रूप में प्रयुक्त नीति शब्द भी इसी कोटि का है। इसमें आध्यात्मिकता भी है, लोक व्यवहार भी है, राज्य–तन्त्र भी है, सदुपदेश भी है। इसीलिये इसके स्थानापन्न शब्द के अभाव में हिन्दी और अंग्रेज़ी में इसी शब्द को अपना लिया गया है– नीति ग्रन्थ, Nīti texts.

मूल संस्कृत में जिन जिन वाक्यों में अपूर्णता लगी, उन्हें अनुवाद में आवश्यक शब्द जोड़कर पूर्ण कर दिया गया है। इन जोड़े हुए शब्दों को बृहद् कोष्ठकों [ ] में प्रदर्शित किया गया है। जहां कहीं भाव और अधिक स्पष्ट करने की आवश्यकता समझी गई, वहां स्पष्टीकरणार्थक शब्दों को सामान्य कोष्ठकों में दिया गया है।

चाणक्यनीति के दो पद्यों में क्रोधमुखी शब्द का प्रयोग है: त्यजेत् क्रोधमुखीं भार्याम्। यहां क्रोधमुखी और त्यजेत् दोनों ही समस्या उत्पन्न करते हैं। क्रोधमुखी के लिये क्रुद्ध या क्रोध में रहने वाली, अंग्रेज़ी में angry या given to anger अनुवाद उपयुक्त नहीं है। यह मूल का भाव ठीक से प्रस्तुत नहीं करता। इसके लिये उपयुक्त शब्द होगा हिन्दी में गुस्सैल और अंग्रेज़ी में irascible, त्यजेत् का यहां अर्थ है से दूर रहे, keep away from.

रामायण–महाभारत–पुराण युग की भाषा की तरह चाणक्यनीति की भाषा में एकाधिक अपाणिनीय प्रयोग दीख जाते हैं। इनमें तीन में आत्मनेपद–परस्मैपद का व्यत्यास है। परस्मैपदी श्रम् धातु का

आत्मनेपद में यहां प्रयोग है– यत्र विश्राम्यते कुलम्। इसी प्रकार आत्मनेपदी अय् धातु परस्मैपद में प्रयुक्त है– यः पलायेत् स जीवति। एवमेव आत्मनेपदी लभ् का परस्मैपद में प्रयोग है– तन्न लभेद् द्विजेभ्यः। अन्यत्र परस्मैपदी त्यज् धातु का आत्मनेपद में प्रयोग है– पुनस्त्यजन्ते पुनराश्रयन्ते। अन्य अपाणिनीय प्रयोगों में उल्लेखनीय हैं भक्षयन्ति के स्थान पर भक्षन्ति का प्रयोग– किं न भक्षन्ति वायसाः, भुङ्क्ते के स्थान पर भुञ्जति का प्रयोग– यः ... नित्यं मौनेन भुञ्जति, यहां दो तरह की अनियमितता है, एक आत्मनेपदी भुज् धातु का परस्मैपद में प्रयोग और दूसरी भ्वादिगण के शप् विकरण का लगाना जबकि यह धातु अदादिगणी है, सञ्चेतव्यम् के स्थान पर सञ्चितव्यम् का प्रयोग (यहां गुण नहीं किया गया), याचयिष्यति में निरर्थक णिच् का प्रयोग जबकि याचिष्यते का ही प्रयोग होना चाहिये था– मामयं याचयिष्यति, नारी और उपोष्य में सन्ध्यभाव।

यदि शीर्षक के आधार पर प्रस्तुत कृति को चाणक्यकृत माना जाय जिसका अर्थ होगा कि यह चतुर्थ शताब्दी ईसा पूर्व की है, तो इसमें श्वा के लिये एकाधिक स्थलों में श्वान शब्द का प्रयोग, जो प्राचीन संस्कृत वाङ्मय में अप्रयुक्त या अत्यल्प प्रयुक्त है और हिन्दी आदि भाषाओं में प्रयुक्त होने के कारण आधुनिकता की झलक देता है, अचम्भित कर देता है। इसी तरह अचम्भित करने वाला एक प्रयोग है भृत्यश्चोत्तरदायकः। हिन्दी में हम आम कहते है– जो नौकर जवाब देता है = जो कहना न माने और उल्टा मालिक पर आक्षेप करे। यह अत्याधुनिक वचन– प्रकार है। इसका एक प्राचीन कृति में पाया जाना, जैसा कि ऊपर कहा गया है, अचम्भित करता है।

इस कृति में सम–सामयिक सामाजिक चिन्तन की भी एक झलक मिलती है। यह वह समय था जब यवनों के प्रति भारतीयों के मन में घृणा चरम सीमा पर थी। पाणिनि सूत्रस्थ व्यृद्धि अर्थ में अव्ययीभाव के उदाहरण के रूप में दुर्यवनम् यवनों की ऋद्धि (=समृद्धि) के अभाव की कामना इसी मानसिकता की द्योतक है। यही द्योतकता पाई जाती है प्रस्तुत कृति की इस पंक्ति में भी–

न नीचो यवनात्परः, यवन से बढ़ कर और कोई नीच नहीं।

भारत एक अध्यात्मपरायण देश है। जीवन मूल्यों के प्रति आस्था इसकी मिट्टी में रची–बसी है। साधु–सन्तों, विचारकों, मनीषियों की सुदीर्घ परम्परा यहां रही है जिसने इसके वासियों में इन मूल्यों की व्याख्या कर देशवासियों को इसे अपनाने पर बल दिया है जिससे समाज स्वस्थ बना रहकर परस्पर सौमनस्य और सौहार्द से एक सुव्यवस्थित जीवन पद्धति अपना सके। नीति से मुख्यतया इन जीवन मूल्यों जिन्हें जैन सम्प्रदाय में 'रत्नत्रय', सम्यक् ज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यक् चरित्र, नाम से अभिहित किया है, से तात्पर्य है। इसके साथ ही लोक–व्यवहार का भी इसमें समावेश है। शठे शाठ्यं समाचरेत् जैसी उक्तियां भी इसमें हैं। राज–तन्त्र के सुचारु सञ्चालन की शिक्षा भी इसमें है। समाज में यह सब शिक्षण पल्लवित–पुष्पित हो सके इसके लिये साधु–सन्तों, मनीषियों और विचारकों ने मार्ग–निर्देशक वचनों का उच्चारण किया। ये वचन अधिकांशतः पद्य रूप में उपनिबद्ध हैं। प्रत्येक पद्य– न केवल पद्य ही, पद्यांश भी– एक न एक मूलभूत तथ्य का प्रतिपादन करता है। इन पद्यों, जिनमें स्वरचित भी हैं और दूसरों द्वारा रचित भी, का संकलन नीति ग्रन्थों के रूप में किया गया है। इन नीति ग्रन्थों के अतिरिक्त अन्य अनेक ग्रन्थ हैं जिनमें उपदेशपरक वाक्यों की भरमार है। विदुरनीति के अतिरिक्त महाभारत के शान्ति और अनुशासन पर्व इस सन्दर्भ में विशेष उल्लेखनीय हैं। अन्य पर्वों में भी ये नीति वाक्य प्रचुर संख्या में हैं। रामायण तथा पुराणों में भी इनकी संख्या पर्याप्त है। हितोपदेश, पञ्चतन्त्र आदि की भी यही स्थिति है। काव्य–नाटकादि की अनेक उक्तियां भी इसी कोटि की हैं। वास्तव में सारा सुभाषित–साहित्य इसी धरातल पर खड़ा है।

नीतिग्रन्थ के नाम से जाने जाने वाले अनेक ग्रन्थ संस्कृत वाङ्मय में हैं– विदुरनीति, शुक्रनीति, [भर्तृहरिकृत] नीतिशतक (शृंगारशतक तथा वैराग्यशतक यद्यपि नीतिग्रन्थ के रूप में उनकी पहिचान नहीं है तो भी नीतिपरक अनेक पद्य उनमें हैं) कामन्दकीय नीतिसार, वररुचि के नाम से सम्बद्ध नीतिरत्न, घटकर्पर विरचित नीतिसार और वेतालभट्ट का नीतिप्रदीप, कश्मीर के राजा शंकरदेव के आश्रित कवि भल्लट का भल्लटशतक, और बिल्हण का शान्तिशतक जिसके परितापशमन,

विवेकोदय, कर्तव्यता तथा ब्रह्मप्राप्ति नामक चार अध्यायों में तपस्या का महत्त्व वर्णित है।

कश्मीर के राजा हर्ष के आश्रित कवि शम्भु ने अन्योक्तिमुक्तालताशतक की रचना की। कुसुमदेव विरचित दृष्टान्तशतक एक उत्तरकालीन ग्रन्थ है जिसे वल्लभदेव ने उद्धृत किया है। इसमें प्रत्येक उक्ति को दृष्टान्त देकर समर्थित किया गया है। उदाहरणार्थ इसका एक पद्य प्रस्तुत है–

उत्तमः क्लेशविक्षोभं क्षमः सोढुं नहीतरः।
मणिरेव महाशाणघर्षणं न तु मृत्कणः।।

"क्लेश को सहन करने में उत्तम पुरुष ही समर्थ हो सकता है, अन्य नहीं। मणि ही शाण की चोट को सहन कर सकती है, मिट्टी का कण नहीं।" अन्य उल्लेखनीय नीति ग्रन्थों में गुमानि का उपदेशशतक है जिसमें आर्या छन्द में आर्ष काव्यों तथा पुराणों के आधार पर उपदेश दिये गये हैं। जलाप के पुत्र और टाकवंश के विद्याधर के पौत्र नागराज ने भावशतक की रचना की जिसमें विविध छन्दों का प्रयोग है।

संस्कृत साहित्य में दार्शनिक विषयों पर भी नीतिकाव्य उपलब्ध होते हैं। शंकराचार्य की शतश्लोकी में वेदान्त के सिद्धान्तों का काव्यमय विवेचन है। अज्ञातकर्तृक तथा सन्दिग्ध समय के शृंगारज्ञाननिर्णय नामक ग्रन्थ में ३२ पद्यों में रम्भा तथा शुक क्रमशः प्रेम और ज्ञान का पक्ष लेकर वाद–विवाद करते दिखाये गये हैं।

सुभाषितग्रन्थों में अज्ञात समय के एक चातकाष्टक का उल्लेख है जिसके उन ग्रन्थों में उद्धृत पद्यों से उसकी एक उत्कृष्ट कृति होने का आभास मिलता है। उस का एक पद्य है–

एक एव खगो मानी वने वसति चातकः।
पिपासितो वा म्रियते याचते वा पुरन्दरम्।।

"वन में केवल एक ही चातक नाम का स्वाभिमानी पक्षी निवास करता है। या तो वह प्यासा मर जाता है या (केवल) इन्द्र से जल हेतु याचना करता है।" भट्ट उर्वीधर नाम के कवि के भी कुछ

नीतिपरक पद्य सुभाषित ग्रन्थों में पाये जाते हैं। उनमें से एक ने संस्कृत जगत् में बहुत प्रसिद्धि पायी है–

निर्गुणेष्वपि सत्त्वेषु दयां कुर्वन्ति साधवः।
नहि संहरते ज्योत्स्नां चन्द्रश्चाण्डालवेश्मनः।।

"सज्जन गुणहीन प्राणियों पर भी दया करते हैं। चन्द्रमा अपनी चांदनी को चाण्डाल के घर पर पड़ने से नहीं रोकता।"

नीतिपरक अनेक ग्रन्थों को चन्द्रगुप्त मौर्य के गुरु एवं महामन्त्री चाणक्य के नाम से सम्बद्ध कर दिया गया हैः चाणक्यनीति, चाणक्यशतक, चाणक्यराजनीति, वृद्धचाणक्य, लघुचाणक्य, चाणक्यसूत्र और प्रस्तुत कृति चाणक्यनीतिदर्पण। विद्वानों का इस विषय में ऐकमत्य नहीं है कि इन ग्रन्थों के रचयिता वस्तुतः चाणक्य थे या कोई और। जो भी वे रहे हों, इतना तो निश्चित है ही कि उनमें दी गई शिक्षा सार्वभौम और सार्वकालिक है। व्यावहारिक जीवन के यथार्थ को उनमें मार्मिक रूप से चित्रित कर क्या करना चाहिये और क्या नहीं, का इनमें स्पष्ट निर्देश है। प्रकृति से लिये गये दृष्टान्तों ने उनकी शिक्षा में चार चांद लगा दिये हैं। दैनिक जीवन में प्रायः यह देखने में आता है कि छद्म प्रकृति के लोग सीधे सादे लोगों को ठग लेते हैं। चाणक्य उन सीधे–सादे लोगों को समझाते हैं कि संसार में बहुत भोले बनने से काम नहीं चलता। उनके सीधेपन का कपटी लोग लाभ उठाकर उन्हें कहीं का नहीं रहने देते। उनका परामर्श उन लोगों के लिये है कि उन्हें बहुत सरल नहीं होना चाहिये–नात्यन्तं सरलैर्भाव्यम्। अपनी इस उक्ति को वे प्रकृति के एक दृष्टान्त से उपोद्बलित करते हैं। सरल शब्द में श्लेष हैं। सरल नाम के वृक्ष भी होते हैं जो नाम के अनुसार सीधे होते हैं जबकि अन्य सामान्य वृक्ष टेढ़े–मेढ़े होते हैं। सरल वृक्ष काटे जाते हैं जबकि टेढ़े–मेढ़े वृक्ष ज्यों के त्यों बने रहते हैं।

नीतिग्रन्थों तथा नीतिकथापरक पञ्चतन्त्र, हितोपदेश आदि ग्रन्थों में पर्याप्त संख्या उन पद्यों की है जो जैसे के तैसे या किञ्चित् पाठान्तर के साथ एक दूसरे में पाये जाते हैं। कितने पद्य इस तरह के हैं जो इन ग्रन्थों में सर्वसाधारण हैं, यह एक बृहद् शोध–योजना

का विषय हो सकता है। इन पद्यों में कितने रामायण, महाभारत, पुराण आदि अन्य ग्रन्थों में भी हैं यह भी इस शोध–योजना का विषय हो सकता है। इसमें विशाल संस्कृत वाङ्मय का अवगाहन करने की आवश्यकता होगी और इन नीति पद्यों को तलाशने की। इससे यह पता चल सकता है कि नीति ग्रन्थों का कितना पद्य–समूह जनमानस में अपना स्थान बना सका था।

प्रस्तुत अनूदित कृति चाणक्यनीतिदर्पण और राजनीतिसमुच्चय नामों से भी अभिहित है।

प्रचलित परम्परा के अनुसार चाणक्य का एक दूसरा नाम कौटिल्य भी था। नीतिग्रन्थों के साथ–साथ उन्होंने विश्वप्रसिद्ध विश्वकोष–परिमाण के ग्रन्थ अर्थशास्त्र की भी रचना की थी। यह रोचक बात है कि नीति ग्रन्थों के साथ उनका चाणक्य नाम और अर्थशास्त्र के साथ कौटिल्य नाम जुड़ गया। इसका क्या कारण था, यह कहना कठिन है। परम्परानुसार उनका एक नाम विष्णुगुप्त भी था जो सम्भवतः पितृप्रदत्त था। वे वैष्णव थे। अपने चाणक्यनीतिदर्पण नाम से प्रसिद्ध राजनीतिसमुच्चय नामक ग्रन्थ– इसी नाम से उन्होंने ग्रन्थ का उल्लेख किया है– वक्ष्ये राजनीतिसमुच्चयम्– का प्रारम्भ विष्णु को प्रणाम करने से उन्होंने किया है– प्रणम्य शिरसा विष्णुम्। 'विष्णुगुप्त' नाम भी उनका वैष्णव होने के कारण ही रखा गया होगा। अर्थशास्त्र में रचयिता के रूप में इसी नाम से उनका उल्लेख है–

दृष्ट्वा विप्रतिपत्तिं बहुधा शास्त्रेषु भाष्यकाराणाम्।
स्वयमेव विष्णुगुप्तश्चकार सूत्रं च भाष्यं च।।

'कौटिल्य' इस नाम के विषय में मतभेद है। टी. गणपति शास्त्री के अनुसार सही नाम कौटल्य है। किसी भी निघण्टु में कुटिल नाम के गोत्रर्षि का उल्लेख नहीं है। कुटल नाम के गोत्रर्षि का उल्लेख अवश्य है–

अथ स्यात्कुटलो गोत्रकृत्यर्षौ पुंसि नप् पुनः।
विद्यादाभरणेऽथ त्रिकुटिलं कुञ्चिते भवेत्।।

यह सम्भव है, जैसा कि रुक्मिणी और सौदामिनी के साथ हुआ, कौटल्य के ट् के बाद के मूल अ का उच्चारण इ की तरह किया

जाने लगा हो। चाणक्य, कौटिल्य या कौटल्य तथा विष्णुगुप्त के अतिरिक्त चाणक्य के अनेक अन्य नाम भी थे जिनका उल्लेख आचार्य हेमचन्द्र ने अपने अभिधानचिन्तामणि नामक ग्रन्थ में किया है–

वात्स्यायनो मल्लनागः कौटिल्यश्चणकात्मजः।
द्रामिलः पक्षिलस्वामी विष्णुगुप्तोऽङ्गुलश्च सः।।

चाणक्य नाम चणक से बना है। चणक के पुत्र होने के कारण वे चाणक्य कहलाये। शब्दसिद्धि के आधार पर ही यह परिकल्पना नहीं है। उपर्युद्धृत आचार्य हेमचन्द्र के पद्य में उन्हें चणकात्मज, चणक का पुत्र कहा गया है।

अपने ग्रन्थ को उन्होंने नानाशास्त्रोद्धृत (जिसमें अनेक शास्त्रों से उद्धरण हैं) कहा है जिससे पता चलता है कि उनकी कृति अनेक ग्रन्थों से लिये नीतिवाक्यों का संकलन है। अपने ग्रन्थ की उपयोगिता को उन्होंने इन शब्दों में रेखांकित किया है– इसे पढ़ने से श्रेष्ठ मनुष्य क्या उसे करना चाहिये और क्या नहीं, क्या उसके लिये शुभ है क्या अशुभ, यह जान जाता है।

चाणक्य के नाम से सम्बद्ध कृतियों में जिनका नामोल्लेख ऊपर किया गया है, छः ऐसी हैं जिनका संस्करण–सम्पादन कर लुडविक स्टर्नबाख़ ने उन्हें एकत्र प्रकाशित किया है। ये छः हैं–

१–२. वृद्धचाणक्य ३. चाणक्यनीतिशास्त्र ४. चाणक्यसारसंग्रह ५. लघुचाणक्य ६ चाणक्यराजनीतिशास्त्र। इनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है–

१–२ वृद्धचाणक्य– इस नाम से दो पाठ उपलब्ध हैं। शैली–भेद के कारण दो पाठ इसके स्वीकृत किये गये हैं– एक अलंकृत शैली पाठ और दूसरा सामान्य शैली पाठ। सामान्य शैली पाठ चाणक्यनीतिदर्पण का ही सरल प्राचीन संस्करण है।

३. चाणक्यनीतिशास्त्र– इसमें १०६ पद्य हैं। इसकी अवतरणिका में एक इस प्रकार का वाक्य है जिससे यह झलकता है कि इसकी रचना या इसके पद्यों का संकलन किसी और ने किया था–

मूलसूत्रं प्रवक्ष्यामि चाणक्येन यथोदितम्।

मैं मूलसूत्र को कहूंगा जैसा कि चाणक्य ने कहा था। चाणक्य के [वचनों] के सार का संग्रह यह है, यह भी इसे कहा गया है। चाणक्यनीतिदर्पण की तरह नानाशास्त्रोद्धृत और राजनीतिसमुच्चय भी इसे कहा गया है।

४. चाणक्यसारसंग्रह– इसमें तीन सौ पद्य हैं जो तीन शतकों में विभक्त हैं और सभी के सभी अनुष्टुप् छन्द में हैं। अवतरणिका में इसे भी नानानीतिशास्त्रोद्धृत और राजनीतिसमुच्चय कहा गया है। राजनीति के साथ–साथ लोकनीति का प्रतिपादन भी इसमें है। इसके प्रणेता का भक्त का स्वरूप भी इसमें झलकता है। काशीवास, सन्त समागम, गंगाजल और शिवपूजन में उसकी आस्था है–

असारे खलु संसारे सारमेतच्चतुष्टयम्।
काश्यां वासः सतां संगो गंगाम्भः शम्भुपूजनम्।।

५. लघुचाणक्य– इसमें आठ अध्याय हैं। प्रत्येक में १० से १३ तक पद्य हैं। गेलेनास नामक एक यूनानी संस्कृतज्ञ ने यूनानी भाषा में इसका अनुवाद कर इसे प्रकाशित किया था। इस अनुवाद के कारण योरुप के देशों में यह बहुत प्रसिद्धि पा गया।

६. चाणक्यराजनीतिशास्त्र– तंजूर में तिब्बती अनुवाद के रूप में यह संगृहीत है। तिब्बती अनुवाद को मूल संस्कृत रूप देने पर यह शान्तिनिकेतन से प्रकाशित हुआ है। इसमें आठ अध्याय हैं जिनकी पद्य संख्या ५३४ है।

जनश्रुति के अनुसार चणक पाटलिपुत्र विद्यापीठ के प्रधान आचार्य थे। किसी कारणवश पाटलिपुत्र के महाराज नन्द ने उन्हें मृत्युदंड दे दिया था। इसके पश्चात् चाणक्य तक्षशिला चले गये थे जहां उन्होंने वहां के आचार्यों से राजनीतिशास्त्र का अध्ययन किया था। अध्ययन समाप्त कर कुछ समय उन्होंने वहां अध्यापन भी किया था।

उनके जीवन–वृत्त के विषय में प्रामाणिक जानकारी कहीं भी उपलब्ध नहीं है। जो कुछ भी जानकारी मिलती है उसके दो ही स्रोत हैं– एक तो विशाखदत्त का नाटक मुद्राराक्षस और दूसरा कतिपय दन्तकथाएं। महाराज नन्द ने चाणक्य का अपमान किया था। वे अगली पंक्ति में थे। महाराज नन्द ने उन्हें घसीट कर बाहर कर दिया था। मुद्राराक्षस में चाणक्य कहते हैं कि जिन्होंने

मुझे पहले अग्रासन से घसीटे जाते हुए देखा था वे ही लोग इस समय सिंह के द्वारा पर्वत की चोटी से गिराये गये गजराज के समान मेरे द्वारा कुल के सहित नन्द को राजसिंहासन से गिराया गया देख रहे हैं—

मामग्रासनतोऽवकृष्टमवशं ये दृष्टवन्तः पुरा
ते पश्यन्ति तथैव सम्प्रति जना नन्दं मया सान्वयं
सिंहेनेव गजेन्द्रमद्रिशिखरात् सिंहासनात् पातितम्।। (१.१२)

चाणक्य ने अपने बुद्धि–बल से महाबली नन्द का उन्मूलन कर दिया था, वह बुद्धि उनकी बनी रहे यही उनकी कामना थी– नन्दोन्मूलनदृष्टवीर्यमहिमा बुद्धिस्तु मा गान्मम। अपने अपमान का प्रतिशोध जब तक मैं नहीं ले लूंगा तब तक मैं चोटी खुली रखूंगा यह भीष्म प्रतिज्ञा जब उन्होंने कर ली तो उसे पूरा करके ही उन्होंने दम लिया। नन्द के परम भक्त मन्त्री राक्षस, जो अपने स्वामी के उन्मूलन का बदला लेने के लिये चाणक्य से दो दो हाथ करने के लिये निरन्तर प्रयास करता रहा, की हर चाल को उन्होंने विफल कर दिया और अपने द्वारा राजसिंहासन पर प्रतिष्ठापित चन्द्रगुप्त मौर्य का मन्त्री बना कर उसकी स्वामिभक्ति को भी खरीद लिया।

चाणक्य दृढ़प्रतिज्ञ थे। अपने उद्‌देश्य की पूर्ति के लिये हर प्रकार का छल–छद्‌म अपनाने में उन्हें कोई परहेज़ नहीं था। गुप्तचरों का जाल उन्होंने बिछा रखा था। सब ओर उनकी दृष्टि थी। एक महान् साम्राज्य के महामन्त्री होने पर भी उनके जीवन में सादगी थी, दिखावा नहीं था। कुटिया में वे रहते थे, जहां उपले तोड़ने के लिये पत्थर का टुकड़ा रखा रहता था और रहता था ब्रह्मचारियों द्वारा लाया गया कुशा का ढ़ेर। काञ्चुकीय उनके घर पहुंचने पर उसका इन शब्दों में वर्णन करता है—

अहो राजाधिराजमन्त्रिणो विभूतिः!
उपलशकलमेतद् भेदकं गोमयानां
बटुभिरुपहृतानां बर्हिषां स्तूपमेतत्।
शरणमपि समिद्‌भिः शुष्यमाणाभिराभि–
र्विनमितपटलान्तं दृश्यते जीर्णकुड्यम्।।

वाह! राजाधिराज के मन्त्री का ऐश्वर्य! (सूखे हुए) उपलों को तोड़ने वाला यह पत्थर का टुकड़ा है, ब्रह्मचारियों द्वारा लाया कुशाओं का यह ढेर है, [धूप में] सूखती हुई समिधाओं के [भार से] झुके हुए छत के अग्रभाग वाला और जीर्ण–शीर्ण दीवारों वाला घर दिखाई दे रहा है।

जो भी छल–प्रपञ्च उनका था वह राज्य की सुरक्षा के लिये था। व्यक्तिगत जीवन उनका नैतिक मूल्यों का नमूना था। उनके विषय में एक दन्त कथा प्रसिद्ध है जो इस प्रकार है-- मैगास्थनीज़ जब राजदूत बनकर पाटलिपुत्र आया तो उसने चाणक्य से मिलने की इच्छा प्रकट की। मिलने के लिये सायंकाल का समय तय हुआ। झुटपुटा हो चला था जब मैगास्थनीज़ उनसे मिलने पहुंचा। दीया जल रहा था। उसकी रोशनी में चाणक्य कुछ कागज़ देख रहे थे। जब मैगास्थनीज़ उनसे मिलने कुटिया में प्रविष्ट हुआ तो चाणक्य ने वह दीया बुझा दिया और एक नया दीया जला दिया। जब मैगास्थनीज़ ने इसका कारण पूछा तो चाणक्य ने कहा कि पहिले वाला सरकारी कागज़ों को देखने के काम में लाया जा रहा था इसलिये उसका तेल का खर्चा सरकारी कोष से था। अब चूंकि मैं व्यक्तिगत तौर पर आपसे मिल रहा हूं तो इसके तेल का खर्चा मेरी व्यक्तिगत आमदनी से होगा। इसीलिये मैंने पहला दीया बुझा दिया और दूसरा दीया जला दिया। यह था चाणक्य का चरित्र! यही कारण है कि वह एक दरिद्र ब्राह्मण होते हुए भी एक महान् साम्राज्य की स्थापना करने में सफल हो .सका।

अपमान के पीछे की एक दन्तकथा है जिसे यहां प्रस्तुत करना अप्रासंगिक न होगा। पाटलिपुत्र के राजा नन्द का शकटार नाम का एक मन्त्री था। किसी कारणवश राजा उससे रुष्ट हो गया और पत्नी और बच्चे समेत उसे कारागार में डाल दिया। वहां तीनों को खाने के लिये मात्र एक कटोरा सत्तू दिये जाते थे जो सभी के लिये अपर्याप्त थे। इतने सत्तू खाकर तीनों में से कोई भी जीवित न रह सकेगा, सभी को प्राणों से हाथ धोना पड़ेगा, इसलिये अच्छा होगा कि हममें से कोई एक उन्हें खाकर प्राण धारण किये रहे, यह उसकी पत्नी और बच्चे ने निर्णय किया। उनके निर्णयानुसार शकटार ने ही ये सत्तू खाये और वे दोनों निराहार रहे। निराहार

रहने के कारण कुछ समय के पश्चात् उन्होंने प्राण त्याग दिये। शकटार किसी न किसी तरह प्राण धारण किये रहा।

एक दिन राजा कहीं जा रहा था। सामने से एक दासी आ रही थी। राजा उसे देख हंसा। वह भी उसे देख हंसी। राजा ने उससे पूछा कि वह क्यों हंसी। उसने कहा महाराज आप हंस रहे थे, आपको देख मैं भी हंसी। राजा ने कहा मैं क्यों हंसा। दासी क्या कहती। उसे उत्तर नहीं सूझ रहा था। उसने कहा महाराज, सोच कर बताऊंगी। वह उत्तर के लिये शकटार के पास पहुंची। शकटार ने पूछा जब राजा हंस रहा था तब उसका मुंह किधर था। दासी का उत्तर था– नाली की ओर। नाली के पास क्या था– शकटार का प्रश्न था। दासी ने कहा– पीपल का पेड़। शकटार ने कहा कि नाली में पीपल के पेड़ का बीज बहा जा रहा था। राजा यह देख हंसा कि यही वह बीज है जिससे इतना बड़ा पेड़ उगा है और वह बीज नाली में बहा जा रहा है। दासी राजा के पास आकर उसकी हंसी का यह कारण बताती है। बात यही थी। राजा विस्मित होता है। दासी की बुद्धि यहां तक पहुंचने की नहीं हो सकती। अवश्य ही इसके पीछे कोई और है, राजा ने सोचा। पता करते–कराते बात शकटार तक पहुंची। राजा को अफ़सोस हुआ कि नाहक ही उसने इतने बुद्धिमान् व्यक्ति को कारागार में डाल दिया। उसने उसे मुक्त कर दिया।

एक दिन शकटार कहीं जा रहा था। वह देखता है कि एक व्यक्ति कुशा की जड़ों में मट्ठा डाल रहा है। वह उसके पास जाकर उसका कारण पूछता है। वह बताता है कि कुछ दिन पूर्व कुशा का कांटा उसके पांव में चुभ गया था। उसने वनस्पति शास्त्रों का अध्ययन कर यह पता लगाया है कि यदि कुशा के जड़ में मट्ठा डाल दिया जाय तो वे फिर कभी नहीं उगेंगे। कुशाओं ने मेरे पांव में कांटा चुभा दिया इसलिये मैं समूल ही इन्हें नष्ट कर रहा हूं, वह व्यक्ति बोला। शकटार ने सोचा यह आदमी काम का है। यदि यह किसी कारणवश राजा से अप्रसन्न हो जाय तो उसका काम बन जाय। वह उसे अपने साथ ले आया।

कुछ समय पश्चात् राजा ने श्राद्ध का आयोजन किया। शकटार ने उस व्यक्ति को उसमें आमंत्रित कर अगली पंक्ति में बैठा दिया और स्वयं कहीं चला गया।

वह व्यक्ति अत्यन्त कुरूप था– काला कलूटा। जब राजा ने उसे देखा तो उत्तेजित होकर उसे बाहर निकाल दिया। तब उस व्यक्ति ने अपनी चोटी खोल ली और प्रतिज्ञा की कि जब तक वह राजा का उन्मूलन नहीं कर लेगा तब तक वह इसे नहीं बांधेगा। उस व्यक्ति का नाम चाणक्य था।

महापद्म नन्द के आठ पुत्र अपनी रानी से थे। एक पुत्र मुरा नामक दासी से था जिसका नाम चन्द्रगुप्त था। वह बहुत मेधावी था और उनमें सब से बड़ा होने के कारण अपने को राज्य का उत्तराधिकारी समझता था। इसी कारण उसकी राज परिवार से नहीं बनती थी। चाणक्य और शकटार ने राज्य का प्रलोभन देकर उसे अपने साथ मिला लिया। शकटार ने महापद्म की दासी को अपने पक्ष में कर ऐसा विषयुक्त भोजन बनवाया कि उसे खाते ही महापद्म नन्द और उसके आठों पुत्र मर गये। अब चाणक्य की चन्द्रगुप्त को राजा बनाने की योजना थी। उसने पर्वतक नामक एक राजा को आधा राज्य देने का प्रलोभन दे अपने वश में कर लिया। मलयकेतु उसका पुत्र था और वैरोचक उस का भाई। पांच अन्य म्लेच्छ राजा उसके सहयोगी थे।

महापद्म नन्द का एक अत्यन्त स्वामिभक्त राक्षस नाम का मन्त्री था। महापद्म के मर जाने से वह बहुत दुःखी था। उसने भी पर्वतक को उसी प्रकार का प्रलोभन दिया जिस तरह का चाणक्य ने दिया था। पर्वतक उसके कहने में आ गया। तब चाणक्य ने विषकन्या प्रयोग से उसे मरवा दिया। मलयकेतु डर कर भाग गया। चाणक्य अपनी चाल में पूर्णतया सफल हुआ।

इसी तरह की एक अन्य दन्त कथा भी है जो इस प्रकार है–

उग्रधन्वा नाम का एक राजा था। नन्द शब्द उसके नाम के साथ लगा था। उसके वक्रनास आदि चार मन्त्री थे जिनमें राक्षस (कात्यायन) अतीव कुशाग्रबुद्धि था। राजा की रानी का नाम सुनन्दा

था। राजा की मुरा नाम की एक दासी भी थी जो उसे बहुत प्रिय थी। एक बार एक तपस्वी राजा के यहां आये। उनका चरणोदक रानी और मुरा की ओर छिड़क दिया गया जिसमें से आठ बूंदें रानी पर पड़ीं और एक मुरा पर। इससे रानी के आठ पुत्र हुए और मुरा के एक जिसका नाम चन्द्रगुप्त था जो बहुत मेधावी था। इसी कारण वह अन्य आठ का, जिनका नाम नन्द रखा गया था ईर्ष्या का भाजन बन गया।

नन्दों से सम्बद्ध एक और कथा भी है। एक बार सिंहल के राजा ने एक मोम का शेर बनवाया और मोम के पिंजड़े में बन्द कर राजा के पास इस सन्देश से भिजवाया कि आपके पास कोई ऐसा बुद्धिमान् है जो बिना पिंजड़ा खोले ही शेर को बाहर निकाल ले। नन्द तो चुप हो गये पर चन्द्रगुप्त ने मोम को आग के ताप से पिघला कर शेर को बाहर निकाल लिया। राजा चन्द्रगुप्त से ईर्ष्या करने लगा। उसने उसे राज्याधिकारी बनाने के स्थान पर देव–पितरों का कार्य सौंप दिया। चन्द्रगुप्त समय की प्रतीक्षा कर रहा था। उसने चाणक्य से मित्रता कर ली। क्योंकि देव–पितृ कार्य उसके अधीन थे, उसने चाणक्य को जो काला और कुरूप था श्राद्ध के लिये निमन्त्रित कर लिया। उसके उद्वेजक रूप के कारण नन्दों ने उसे अपमानित कर पंक्ति से बाहर कर दिया। उसने उस अपमान का बदला उनका उन्मूलन कर और चन्द्रगुप्त को राज्यसिंहासन पर प्रतिष्ठापित कर लिया।

प्रस्तुत ग्रन्थ की शैली बहुत सरल एवं प्राञ्जल है। ग्रन्थकार अपनी बात को सशक्त ढंग से प्रस्तुत करने के लिये अनेक उपाय अपनाते हैं। कहीं तो वे उपमा का आश्रय लेते हैं यथा– "एकेनापि सुपुत्रेण विद्यायुक्तेन साधुना आह्लादितं कुलं सर्वं यथा चन्द्रेण शर्वरी", केवल एक विद्यावान् साधु स्वभाव के सुपुत्र द्वारा समस्त कुल आह्लादित हो जाता है जैसे कि चन्द्रमा से रात्रि; मूर्खः भिनत्ति वाक्यशल्येन ह्यदृष्टः कण्टको यथा, मूर्ख न दिखाई देने वाले कांटे की तरह वाग्बाण से छेद डालता है; रूपयौवनसम्पन्ना विशालकुलसम्भवा विद्याहीना न शोभन्ते निर्गन्धा इव किंशुकाः, सुरूप और जवान यदि विद्याहीन हैं तो जंचते नहीं जैसे कि गन्धहीन किंशुक (टेसू)– कहीं

दृष्टान्त का– दर्शनध्यानसंस्पशैर्मत्सी कूर्मी च पक्षिणी शिशुं पालयते नित्यं तथा सज्जनसंगतिः, जिस प्रकार मादा मछली, मादा कछुआ और मादा पंछी देखने, सोचने और छूने से शिशु की पालना करती हैं उसी प्रकार सज्जन संगति व्यक्ति की–तो कहीं अन्योक्ति का–

दानार्थिनो मधुकरा यदि कर्णतालै–
दूरीकृता करिवरेण मदान्धबुद्ध्या।
तस्यैव गण्डयुगमण्डनहानिरेषा
भृंगाः पुनर्विकचपद्मवने वसन्ति।।

यदि मदजल के लिये लालायित भंवरों को गज श्रेष्ठ ने मदान्ध होकर कानों को हिला कर भगा दिया तो इससे उसके कपोलों की सजावट में ही कमी आई, भंवरे तो खिले हुए कमलों की क्यारियों में जा बसे।

प्रस्तुत कृति का रचयिता केवल उपदेशक ही नहीं है, कवि भी है। इसीलिये बीच–बीच में अपने पद्यों को कल्पना के शृंगार से सजा कर उन्हें आकर्षक बना देता है। कीर्तन के समय निर्जीव मृदंग की 'धिक् तान् धिक् तान्' ध्वनि में उसे उन लोगों के धिक्कार का आभास होने लगता है जिनका मन यशोदा के पुत्र के चरण कमलों में नहीं लगता, जिनकी रसज्ञा (=जिह्वा) रस की पहिचान होने पर भी (रसज्ञा का मूलार्थ यही हैं, प्रचलित अर्थ जिह्वा है। यहां दोनों घटित होते हैं) गोपियों के गुणानुवाद में रुचि नहीं लेती, जिनके कान श्रीकृष्ण की ललित कथाओं को सुनने में उत्सुक नहीं दिखते। यहां धिक् तान् धिक् तान् इस अनुकरणात्मक ध्वनि में जोकि एक सामान्य बात है अपनी कल्पनाशक्ति से एक विशेष अर्थ निकाल ग्रन्थकार ने उसे सजीवता प्रदान कर दी है।

कहीं कहीं कथ्य को आकर्षक बनाने के लिये ग्रन्थकार ने प्रश्नोत्तर शैली को भी अपनाया है। एक पथिक किसी नगर में पहुंच एक ब्राह्मण से पूछता है [प्रश्न]– बताइये इस नगर में बहुत बड़ा कौन है? [उत्तर]– ताल वृक्षों का झुरमुट। [प्रश्न]– देने चला कौन है? [उत्तर]– धोबी जो प्रातः वस्त्र ले जाकर रात को लौटा देता है। [प्रश्न]– पराई पत्नी और पराया धन हरने में कौन निपुण है? [उत्तर]– सभी। [प्रश्न]– कैसे जीवन जी रहे हो? [उत्तर]– विष में रहने वाले कीड़े के समान।

एकाध स्थल में पहले गिनती गिनाने मात्र से ग्रन्थकार अपनी बात कहता है। बाद में उस गिनती की व्याख्या करता है। यथा–

सिंहादेकं बकादेकं शिक्षेच्चत्वारि कुक्कुटात्।
वायसात् पञ्च शिक्षेच्च षट् शुनस्त्रीणि गर्दभात्।।

(मनुष्य) सिंह से एक, बगुले से एक, मुर्गे से चार, कौए से पांच, कुत्ते से छः और गधे से तीन [गुण] सीखे। ये एक, चार, पांच, छः और तीन क्या हैं इनका विवरण वह आगे के पद्यों में देता है।

कहीं कहीं ग्रन्थकार अपनी बात को कह उसमें निहित विषमता को प्रश्न के माध्यम से रेखांकित करता है। यह विषमता को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करने की उसकी शैली है। उसके बाद वह फलितार्थ प्रस्तुत करता है–

हस्ती स्थूलतनुः स चाङ्कुशवशः किं हस्तिमात्रोऽङ्कुशो
दीपे प्रज्वलिते प्रणश्यति तमः किं दीपमात्रं तमः।
वज्रेणापि हताः पतन्ति गिरयः किं वज्रमात्रो गिरि–
स्तेजो यस्य विराजते स बलवान् स्थूलेषु कः प्रत्ययः।।

"हाथी का शरीर कितना भारी भरकम होता है, वह भी अंकुश से बस में कर लिया जाता है, क्या अंकुश हाथी के जितना होता है? दीया जब जलता है तो अन्धेरा नष्ट हो जाता है, क्या अंधेरा दीये जितना होता है, गाज जब गिरती है तो पहाड़ भी ढ़ह जाते हैं, क्या पहाड़ गाज जितना होता है? जिसमें तेज (=शक्ति) है वही बलवान् है, आकार के बड़ा होने का कोई अर्थ नहीं।

इस ग्रन्थ की शैलीगत अन्य विशेषताओं में एक है क्रम के अनुपालन का अभाव। पत्रं नैव यदा करीरविटपे दोषो वसन्तस्य किं में दोष शब्द का प्रयोग है। आगे की दो पंक्तियों में इस दोष के स्थान पर दूषण शब्द का प्रयोग है– नोलूकोऽप्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणम् आदि। इसी प्रकार–

नखिनां च नदीनाञ्च शृंगिणां दन्तिनां तथा।
विश्वासो नैव कर्तव्यः स्त्रीषु राजकुलेषु च।।

में नखिनां, नदीनां, शृंगिणां और दन्तिनाम् में षष्ठी का प्रयोग है और स्त्रीषु और राजकुलेषु में सप्तमी का। अर्थ यहां 'का' का ही है–

नाखून वालों आदि का तथा स्त्रियों एवं राजपरिवारों का विश्वास नहीं करना चाहिये।

ग्रन्थकार का अभिप्राय प्रभावी ढंग से अपनी बात कहने से है। पदों की आवृत्ति यदि इसमें सहायक है तो इसका भी वह आश्रय लेता है। चाहे संकलन रूप में ही हो, कृतिकार का अपना चिन्तन इस कृति में समाहित है–वह चिन्तन जिसमें जीवन का कोई भी पक्ष अछूता नहीं रहा।

ग्रन्थकार अपने ग्रन्थ की उपयोगिता को जानता है। वह कहता है कि उसके ग्रन्थ को पढ़ने से व्यक्ति सर्वज्ञ बन जाता है– येन विज्ञानमात्रेण सर्वज्ञत्वं प्रपद्यते, और क्या उसे करना चाहिए और क्या नहीं, क्या उसके लिए शुभ है और क्या अशुभ, यह जान जाता है– नरो जानाति...... कार्याकार्यं शुभाशुभम्। उसका यह कथन उसके इस स्वरूप को उद्‌घाटित करता है जिसमें वह अपने प्रति इतने विश्वास से भरा दिखाई देता है कि उसका ग्रन्थ जितना भी उपयोगी ज्ञान हो सकता है उसे पाठक या श्रोतृवृन्द को उपलब्ध करा उसका कल्याण कर सकता है जोकि उसकी कृति के प्रणयन का मुख्य बिन्दु है– तदहं सम्प्रवक्ष्यामि लोकानां हितकाम्यया।

चाणक्यनीति जैसी विलक्षण कृति का अनुवाद करने में भगवान् ने मुझे निमित्त बनाया इसलिए उसके प्रति मैं नतमस्तक हूँ। इसके लिए सर्वप्रथम मैं उनके चरणों में प्रणाम निवेदन करता हूँ। प्रमुख उद्योगपति एवं भारतीय संस्कृति के प्रचार–प्रसार में समर्पित डॉ. बिट्ठलदास मूँधड़ा जी ने इसके प्रकाशन का दायित्व अपने ऊपर लिया इसलिए उनका हृदय से आभारी हूँ। प्रकाशन कार्य में सहयोग के लिए श्री शंकर लाल सोमानी तथा श्री अजय विक्रम सिंह का भी मैं आभारी हूँ। श्रीगंगानगर के मेरे अंतरंग मित्र मेरे नामराशि डा. सत्यव्रत वर्मा ने पाण्डुलिपि रूप में इसकी टंकित प्रति को सूक्ष्म दृष्टि से देखा, प्रूफ संशोधन किया तथा अनेक महत्त्वपूर्ण सुझाव दिए। उनका भी हृदय से कृतज्ञ हूँ। मुझे पूर्ण विश्वास है कि अनुवाद के माध्यम से चाणक्यनीति जन–जन तक पहुँच सकेगी जिससे समाज को एक सही दृष्टि मिल सकेगी।

Preliminary Observations

The great poet Kālidāsa began his world-famous play the *Abhijñānaśākuntala* by introducing King Duṣyanta on the stage chasing a deer in a forest on a hunting expedition. In a bid to save its life it gallops on with the king hotly in chase of it. As he is about to reach it, intervene the hermits with a request not to kill it, it belonging to the hermitage, to which he agrees. They also prefer the request to him to come to the hermitage and enjoy its hospitality. As he is about to enter it, he feels throbbing in his right arm which is indicative of something good. This sets him athinking. The hermitage is so peaceful. What good can come to him from it, argues he to himself. Then he permits himself the observation that whatever is destined to happen has its doors everywhere: *bhavitavyānāṁ dvārāṇi bhavanti sarvatra*.

The present translation is an illustration of the Kālidāsan observation. I had no plans to translate the *Cāṇakyanīti* and bring it out in book form. It was the last few days of the month of May, 2012. I was in search of an important paper. For that I was scouting the old files. I could not find the desired paper. I, however, laid my hand on a bunch of pages. These contained translation in Hindi and English of the verses of the *Cāṇakyanīti*, not in regular order but with substantial gaps. I had all but forgotten about it. I do not know as to for what I had translated the verses and why intermittently. My instant reaction was that I should also translate the verses left out in the earlier attempt so that the work gets translated in its entirety. This would lead to twofold good. One, it will ensure the preservation of the portion already translated and two, it will put it to some use which otherwise would have remained confined to files with the risk of its getting lost eventually. With 30% work in hand I started working on the remaining 70% work.

Translation of a number of works in different genrés had very well taught me that it was not easy to translate a work. There are several pitfalls in it which one needs to guard against. While one needs to be faithful to the original in content, one has also to be careful about the genius of the speech in which he is to put it. The translator thus finds himself in a very unenviable position. While he cannot deviate from the original, he has to focus on the suitability of expression in which he has to put it. The ace test of translation is that it should not look like translation. It should have all the naturalness of the original. I have tried to focus on this as best as I could. The very fact that 70% of the work could be brought to completion within just twenty-five days is proof positive of the fact that when pen starts gliding on paper, there is no stopping of it. Words start crowding in. There is no pick and choose. It is just automation. Translation then does not remain a craft. It gets transformed into an art.

Translation has its problems when it is attempted in languages which unlike Hindi and other regional languages of India are not impacted by Sanskrit. English is one such language. For its wider reach it has also been adopted as the medium for translation of the present work. It was not easy to hit upon right equivalents in English of Sanskrit words. The difficulty in identifying right equivalents was felt in the case of even the ordinary words. In the sentence अपुत्रस्य गृहं शून्यम् while सूना can and does go well with Hindi, English needed an assiduous attempt to fix the right word for it. A number of alternatives like empty, desolate, etc. came to mind but none clicked. What clicked was the word barren. Similarly, in त्यजेदेकं कुलस्यार्थे while Hindi could go well with छोड़े या परवाह न करे या हाथ से जाने दे, the options in English like 'give up' or 'renounce' did not appeal. Surrender, it was felt, could be the proper word. While this is the proper word in this context, in another context it is not so. In the sentence अल्पविद्यं गुरुं . त्यजेत् 'surrender' cannot go well with त्यजेत्.

The sense could better be expressed by the word 'avoid' or more appropriately 'keep at a distance'. In Hindi it could be उसे दूर रखे .

The bisyllabic word दोष of Sanskrit has different connotations in different contexts. Sometimes it means fault, sometimes shortcoming, sometimes loophole, sometimes bad or evil qualities or traits. In the sentence पत्रं नैव यदा करीरविटपे दोषो वसन्तस्य किम् it will have to be rendered as fault: If not even a leaf grows on the branch of a Karīra tree, does it mean that it is the fault of the spring? In Hindi it could be अपराध : यदि करीर की टहनी पर एक पत्ता तक नहीं उगता तो इसमें वसन्त का अपराध है क्या? Occasionally, the translator has to supply a word on his own to complete the sentence. The sentence above has just the word नैव, not at all. The translator has to supply the word उगता है in Hindi and 'grows' in English. It is then that the sense gets clear. In the sentence कस्य कुले नास्ति दोषः, दोष will have to be translated as खोट in Hindi and 'loophole' in English: Which family does not have its loophole/s? The word कुल would have to be taken to mean race or family, वंश or परिवार. In एको गुणः खलु निहन्ति समस्तदोषान्, दोषान् signifies कमियां, shortcomings, एक गुण समस्त कमियों पर भारी पड़ता है अर्थात् सब दोषों को ढ़क लेता है। [निहन्ति literally means kills, मारता है, which needs to be reworded as भारी पड़ता है or overweighing or covering], even a single quality overweighs or covers all the shortcomings. In

अनृतं साहसं माया मूर्खत्वमतिलुब्धता।
अशौचं निर्दयत्वं च स्त्रीणां दोषाः स्वभावजाः।।

दोषाः needs to be translated as दुर्गुण in Hindi and 'bad traits' in English: Speaking untruth, rashness, etc. women have in them by their very nature. In लालनाद् बहवो दोषास्ताडनाद् बहवो गुणाः, दोषाः in Hindi means बुराइयां and in English evils : लाड लड़ाना अनेक बुराइयों का कारण है, pampering is the source of many an evil.

हतः ordinarily means killed, मरा हुआ. In हतो यज्ञस्त्वदक्षिणः it means निष्फल or अधूरा in Hindi and waste or futile in English, जिस यज्ञ में दक्षिणा नहीं वह निष्फल है, अधूरा है, the sacrifice wherein no fee is given is just waste or incomplete or an exercise in futility. In धर्म एव हतो हन्ति it means न पालन किया गया, not observed; धर्म का यदि न पालन किया जाय तो वही मार डालता है, Dharma, if not observed, harms. धर्म का न पालन करना ही धर्म का मारना है, not observing Dharma is its killing or harming. हतः when used with क्षेत्र : अल्पबीजं हतं क्षेत्रम् means किसी काम का नहीं, useless: कम बीज वाला क्षेत्र किसी काम का नहीं, a field with insufficient seeds is of no use (giving only a small yield). In the verse of which the above words form a part there is reference to विद्या and स्त्रियः. Even if there is no word हता going with विद्या and हताः going with स्त्रियः, still, हतं occurring in the second hemistich of the verse hints at them. The first hemistich has just the expression आलस्योपहता विद्या. Here हता will have to be supplied to complete the sense. Similarly, in परहस्तगताः स्त्रियः [हताः] हताः means किसी काम की नहीं रहतीं, are of no use. In वज्रेणापि हताः पतन्ति गिरयः, हताः would have to be rendered in Hindi as गिरना and in English as 'struck' : जब पहाड़ों पर गाज गिरती है तो वे ढ़ह जाते हैं, the mountains fall flat when struck with thunderbolt. In हतं ज्ञानं क्रियाहीनं, हतं means निरर्थक in Hindi and of no value in English. In हतश्चाज्ञानतो नरः, हतः means कुछ भी न रहना in Hindi and as good as dead in English.

In the *Cāṇakyanīti* the expression क्रोधमुखी with reference to wife, भार्या, occurs more than once. The proper translation of it in Hindi should be गुस्सैल and in English irascible. क्रुद्ध या क्रोध में रहने वाली, angry or given to anger would not go well here. The full expression is त्यजेत् क्रोधमुखीं भार्याम्. त्यजेत् poses a problem here. छोड़ दे or give up here won't do. What clicks here are the words से दूर रहे, keep distance from an irascible wife.

There are several words in Sanskrit which are difficult to translate, especially in English. Dharma is one such. Since it is of common use in Hindi, it can go there as it is. The words righteousness, etc. for it in English are too weak to catch its true import. That is the reason that they have got acceptance there. Another word of the same category is शील, शीलं परं भूषणम् which is more than the 'good conduct' the expression by which it is rendered generally. Another word of the same category is कर्मन् which has been adopted in English as such: the theory of Karman. Action is no word for it. The word नीति used in the title of the work under translation is also of that type. It has everything in it; spirituality, worldly wisdom, polity, good advice and so on. So in the absence of a suitable word that can catch its spirit it has been accepted in Hindi and English as such: नीतिग्रन्थ, Nīti texts.

In line with the language of the *Rāmāyaṇa*, the *Mahābhārata* and the Purāṇas the *Cāṇakyanīti* has a share of unpāṇinian forms. Far greater in numbers are the reversals of the Parasmaipada and the Ātmanepada. √*Śram* which is Parasmaipadin is used in Ātmanepada : यत्र विश्राम्यते कुलम्. Similarly, √ *tyaj* which is Parasmaipadin is used in Ātmanepada: पुनस्त्यजन्ते पुनराश्रयन्ते. Conversely, √ *ay* and √ *labh* which are Ātmanepadins are used in Parasmaipada : यः पलायेत् स जीवति, तान् लभेद् द्विजेभ्यः. Of other unpāṇinian uses could be mentioned the use of √ भक्ष and √ भुज् with the शप् विकरण of the First Conjugation, किं न भक्षन्ति वायसाः, यः .... नित्यं मौनेन भुञ्जति. भुञ्जति has double irregularity, one, the use of it as a root of the First Conjugation and the other the use of it in Parasmaipada. In सञ्चितव्यम् the absence of Guṇa and in याचयिष्यति the addition of the causal suffix णिच्, for no reason, the idea being simply of याचिष्यते, are the unpā. ninianisms.

If on the basis of the association of the word Cāṇakya with the title of the work *Nītidarpaṇa*, it is to be assumed to

be the work of the same Cāṇakya who having been the Prime Minister of Candragupta Maurya (whose date is fairly certain) must have belonged to the fourth cen. B.C., the occurrence in it of such expressions as भृत्यश्चोत्तरदायकः, जवाब देने वाला नौकर, जो मालिक का कहना नहीं मानता और उलटे उससे सवाल जवाब करता है, who answers back the master in a show of disobedience, and श्वान at more than one place which has no or scanty presence in older Sanskrit literature are a source of not a little surprise, giving the work a look of modernity, they being in common use in Hindi and some other regional languages.

The *Cāṇakyanīti* provides a good glimpse of the contemporary thinking. The time it was composed was marked by intense hatred for Yavanas, the Greek or for that matter all foreign invaders, who were out to subjugate the country with their life-style running counter to that of the locals—mark the expression शयाना भुञ्जते यवनाः, the Yavanas partake of food while lying, a practice abhorring to high-bred Indians of the time. The Yavanas through their unseemly behaviour, this is how one can infer it, invited on themselves the curse of the locals who would not take to them kindly as evidenced by such expressions as दुर्यवनम् which is cited in grammatical texts as an example of the Avyayībhāva compound in the sense of व्यृद्धि (वि+ऋद्धि), यवनानां व्यृद्धिर्दुर्यवनम्, the absence of prosperity of the Yavanas which was the wish of the then Indians. It is the Yavanas who were picked up for व्यृद्धि. The same feeling of intense revulsion for the Yavanas the *Cāṇakyanītidarpaṇa* also echoes when it says: न नीचो यवनात् परः, यवन से बढ़कर और कोई नीच नहीं है, there is none more vile than the Yavana.

India is a spiritual country. With spirituality woven in its texture, it has had a long line of saints and sages, thinkers and philosophers, the embodiments of high morals who through their speeches, discourses and works had tried to inculcate

them in their compatriots through the ages so that a healthy society marked by mutual love and accommodation could be built up. Nīti primarily means these human values which the Jain tradition represents by the word *Ratnatraya*, the Three Jewels, *samyag jñāna, samyag darśana* and *samyak caritra*, the right knowledge, the right thinking and the right conduct. Along with that it includes in its ambit worldly knowledge and wisdom. That is why it has in it such statements as शठे शाठ्यं समाचरेत्, one should be deceitful to cheats. It also has the enunciation in it of the principles of Polity for the smooth running of the State apparatus. For all this to take root in society the sages and saints, the thinkers and philosophers took upon themselves the task of giving directions to it which are couched, more often than not, in verse. Every verse in their directions—that is what the Nīti texts are--; it need not necessarily be a full verse, it could well be a hemistich or just a strophe—is an independent unit in itself propounding some fundamental truth or the other. Some of these verses are the compositions of other authors, the authors of the other Nīti texts, posing a problem, fairly intractable at that, as to who has borrowed from whom, intractable also on the count that their chronology is still undecided in spite of the Herculean efforts of a galaxy of scholars. Further, it is not always that these verses or parts thereof have their presence in the Nīti texts only; they have their presence in good numbers in the *Rāmāyaṇa*, the *Mahābhārata*, the Purāṇas, the *Pañcatantra*, the *Hitopadeśa*, the *Narābharaṇa* and so on. Some of these have their presence also in Sanskrit works of the classical period, the poems and the plays. Of the older works the *Mahābhārata* steals the palm, its Śānti and Anuśāsana Parvans to a greater extent and other Parvans to a lesser extent abounding in the Nīti stanzas. As a matter of fact, the entire Subhāṣita literature has a large Nīti content a part of which has found its way into the texts going by the name Nīti.

There are a number of texts in Sanskrit that carry in their titles the term Nīti. They are: the *Viduranīti*, the *Śukranīti*, the *Nītiśataka* of Bhartṛhari (his *Śṛṅgāraśataka* and the *Vairāgyaśataka* not passing off as Nīti texts have also a good number of Nīti stanzas), the *Kāmandakīyanītisāra*, the *Nītiratna* ascribed to Vararuci, the *Nītisāra* of Ghaṭakarpara and the *Nītipradīpa* of Vetālabhaṭṭa. Some other works not carrying the word Nīti in their titles but having Nīti as the core of their teachings are the *Bhallaṭaśataka* of Bhallaṭa and the *Śāntiśataka* of Bilhaṇa, the *Anyoktimuktālatāśataka* of Śambhu, the protégé of the Kashmirian King Harṣa, the *Dṛṣṭāntaśataka* of Kusumadeva, a later work quoted by Vallabhadeva where every statement is corroborated by an example, e.g.,

उत्तमः क्लेशविक्षोभं क्षमः सोढुं नहीतरः।
मणिरेव महाशाणघर्षणं न तु मृत्कणः।।

"It is only the superior one who is in a position to bear with the agitation caused by adversity. It is only a gem and not a particle of earth that can withstand the rubbing on the big hempen".

"क्लेश को सहन करने में उत्तम [व्यक्ति] ही समर्थ हो सकता है, अन्य नहीं। शाण की रगड़ को सहन करने में मणि ही समर्थ हो सकती है, मिट्टी का कण नहीं।

Of the other notable works of the Nīti type, mention may be made of the *Upadeśaśataka* of Gumāni which has instructions based on the age-old texts and the Purāṇas in verse in the Āryā metre.

A work called *Bhāvaśataka* by Nāgarāja, son of Jalāpa and grandson of Vidyādhara of the Ṭāka family is also a work of the Nīti type.

Sanskrit literature has in it certain Nīti texts on philosophical subjects also, the most prominent of which is the *Śataślokī* of Śaṅkarācārya which deals with the Vedantic principles.

The *Śṛṅgārajñānanirṇaya* of an anonymous author of uncertain date carries in it in 32 verses the dialogue between Rambhā and Śuka on Love *(Prema)* and Knowledge *(Jñāna)* respectively.

In the Subhāṣita texts one comes across a small work, the *Cātakaśataka*, which on the basis of one of its verses quoted in them seems to have been a fairly elegant work:

एक एव खगो मानी वने वसति चातकः।
पिपासितो वा म्रियते याचते वा पुरन्दरम्।।

"There is only one self-respecting bird that lives in a forest, the Cātaka. It either dies out of thirst or begs (water) of Indra."

वन में केवल एक ही स्वाभिमानी पक्षी चातक निवास करता है। या तो वह प्यासा मर जाता है या इन्द्र से जल हेतु याचना करता है।

A few stanzas in the name of Bhaṭṭa Urvīdhara figure in the Subhāṣita texts. One of them has become a household word in Sanskrit:

निर्गुणेष्वपि सत्त्वेषु दयां कुर्वन्ति साधवः।
नहि संहरते ज्योत्स्नां चन्द्रश्चाण्डालवेश्मनः।।

"The good people show compassion even to those bereft of merit. The moon does not withdraw its light from the house of an outcaste (Cāṇḍāla)."

सज्जन गुणहीन प्राणियों पर भी दया करते हैं। चन्द्रमा अपनी चांदनी को चाण्डाल के घर पर पड़ने से नहीं रोकता।

A number of Nīti texts have been ascribed to Cāṇakya, the preceptor and Prime Minister of Candragupta Maurya. They are: the *Cāṇakyanīti*, the *Cāṇakyaśataka*, the *Cāṇakyarājanīti*, the *Vṛddhacāṇakya*. Of these the following six Ludwik Sternbach has edited critically and brought out in a

single volume. These six are: (1-2) *Vṛddhacāṇakya* (3) *Cāṇakyanītiśāstra* (4) *Cāṇakyasārasaṅgraha* (5) *Laghucāṇakya* (6) *Cāṇakyarājanītiśāstra*.

A brief description of them is as under :

(1-2) Vṛddhacāṇakya

This available in two recensions is divided on the basis of their style which in one case is ornate and in the other is simple. The simple one is an old edition in simple form of the *Cāṇakyanītidarpaṇa*.

(3) Cāṇakyanītiśāstra

It has 109 verses. From a verse in its introductory portion it appears to have been composed/compiled by some one else. The verse is:

मूलसूत्रं प्रवक्ष्यामि चाणक्येन यथोदितम्

"I will reproduce the *mūlasūtra* as told by *Cāṇakya*." It has also been described as *Cāṇakyasārasaṅgraha*, a compilation of the essence of the [words] of Cāṇakya. Apiece with *Cāṇakyanītidarpaṇa* it has been described as नानानीतिशास्त्रोद्धृत, culled from different Nīti texts and राजनीतिसमुच्चय, compilation of Polity.

(4) Cāṇakyasārasaṅgraha

It has 300 verses that are divided in thee Śatakas, centuries. In the introductory portion it is also described as नानानीतिशास्त्रोद्धृत, culled from different Nīti texts and राजनीतिसमुच्चय a compilation of Polity. Along with statecraft it also deals with worldly wisdom. It reveals the devotee in the author/compiler who has a liking for life in Kāśī, the water of the Gaṅgā, the association with the good and the worship of Śiva:

असारे खलु संसारे सारमेतच्चतुष्टयम्।
काश्यां वासः सतां संगो गंगाम्भः शम्भुपूजनम्।।

(5) Laghucāṇakya

It has eight chapters. A chapter has ordinarily between 10 to 13 verses. A Greek scholar had published it with his Greek translation. Because of this translation it got great publicity in Europe.

(6) Cāṇakyarājanītiśāstra

The *Tanjur* includes it in Tibetan translation. With the original form of it reconstructed from the translation it has appeared from Santiniketan. Its 534 verses are divided in eight chapters.

There is no unanimity among scholars about the authorship of the above works. Nobody can say for sure that they are the works of Cāṇakya or some one else. Whoever he or they might have been, one thing is clear that their teaching transcends all barriers of time and space. It depicts in all vivid details the realities of every day life and tenders the much-needed advice as to what needs to be done and how in a given situation. The examples culled from nature in support of the assertions reinforce their veracity. It is a common experience as to how cheats masquerading as well-meaning persons deceive the ordinary folk who with their simplistic approach are not able to see through their game-plan and get entrapped with no possibility of redemption. Cāṇakya—since tradition associates him with the authorship of these works, he may have to be taken as their author or compiler—takes upon himself out of humanitarian considerations the task of advising these simple-minded people, ignorant of the ways of the world, not to be too simple, नात्यन्तं सरलैर्भाव्यम्. With a pun on the word सरल which also means a tree of that name, in English the pine tree, he says that in the raging storm it is they that fall apart while the crooked ones, कुब्जाः, stay put :

नात्यन्तं सरलैर्भाव्यं गत्वा पश्य वनस्थलीम्।
छिद्यन्ते सरलास्तत्र कुब्जास्तिष्ठन्ति पादपाः।।

As said earlier, there is a large corpus of Nīti verses that are found in common either in the same form or with minor variations in the Nīti texts or such texts as deal with Nītikathās like the *Pañcatantra*, the Hitopadeśa or the mighty epics the *Rāmāyaṇa* and the *Mahābhārata* or the vast corpus of the Purāṇic literature. How many are such verses is a matter of serious investigation, a good subject for an independent research project. The project may need wading through a mass of Sanskrit literature to gauge the quantum of the Nīti verses, a daunting task indeed. It will also provide lovers of ancient Indian wisdom to discover for themselves the number of the Nīti verses that had found place for themselves in the minds of the people to have been felt necessary to be included in more than one text.

As per the well-known tradition Kauṭilya was another name of Cāṇakya. Along with the Nīti texts he had also authored the world famous treatise on Polity and Statecraft, the *Arthaśāstra* of encyclopaedic proportions. It looks strange as to for what reason the name Cāṇakya came to be associated with the Nīti texts and Kauṭilya with the *Arthaśāstra*.

About the name Kauṭilya there is a difference of opinion. T. Ganapati Sastri is of the view that the correct form of the word is Kauṭalya. None of the *Nighaṇṭu* texts makes a mention of a Gotrarṣi of the name of Kuṭila. There is, however, reference to one Kuṭala :

अथ स्यात्कुटलो गोत्रकृत्यर्षौ पुंसि नप् पुनः।
विद्यादाभरणेऽथ त्रि कुटिलं कुञ्चिते भवेत्।।

It is possible, as is the case with Rukmiṇī and Saudāminī, the original अ came to be pronounced as इ. Along with

Kauṭilya, Cāṇakya had another name Viṣṇugupta that figures in the last verse of the *Arthaśāstra*:

दृष्ट्वा विप्रतिपत्तिं बहुधा शास्त्रेषु भाष्यकाराणाम्।
स्वयमेव विष्णुगुप्तश्चकार सूत्रं च भाष्यं च।।

This name seems to have been inspired by his having been a Vaiṣṇava. He begins the *Cāṇakyanītidarparṇa* with obeisance to *Viṣṇu*, प्रणम्य शिरसा विष्णुं. He had many other names too which the *Abhidhānacintāmaṇi* of Hemacandra records:

वात्स्यायनो मल्लनागः कौटिल्यश्चणकात्मजः।
द्रामिलः पक्ष्मिलस्वामी विष्णुगुप्तोऽङ्गुलश्च सः।।

As for the name Cāṇakya, it is derived from the word Caṇaka. He was so called because of his being the son of Caṇaka. In the verse quoted above Hemacandra specifically mentions him to be the son of Caṇaka: *Caṇakātmajaḥ*. Caṇaka is said to have been the head of the Pāṭaliputra Seminary. For some reason Nanda, the ruler of Pāṭaliputra had got annoyed with him and awarded him capital punishment. Cāṇakya thereafter had left for Takṣaśilā where he studied the science of Polity under the great scholars of the time. On completing his education he is said to have taught there for some time.

There is no authentic information about his life. The only sources about it are Viśākhadatta's play the *Mudrārākṣasa* and some stray legends. It is said that King Nanda had insulted him and had thrown him out from the first row where he was seated. There is reference to it in the *Mudrārākṣasa* where Cāṇakya, after he had dethroned Nanda along with his family, says that those who had earlier seen him being dragged down from the first seat are a witness now to his (Nanda's) being cast down from the lion-seat सिंहासनात् (throne) like a lordly tusker being pulled down by a lion from the top of a hill:

मामग्रासनतोऽवकृष्टमवशं ये दृष्टवन्तः पुरा
ते पश्यन्ति तथैव सम्प्रति जना नन्दं मया सान्वयं
सिंहेनेव गजेन्द्रमद्रिशिखरात् सिंहासनात् पातितम्।। (१.१२)

Through the sheer force of his superior intellect he had uprooted Nandas. His only wish is that that intellect of him may never leave him: नन्दोन्मूलनदृष्टवीर्यमहिमा बुद्धिस्तु मा गान्मम (१.२५).

He then undertook a terrible vow that he would not tie his lock of hair on the crown of the head till he had eliminated Nandas. He foiled every attempt of their loyal Minister Rākṣasa who had been trying to outwit him, and through his machinations bought his loyalty to his protégé Candragupta Maurya whom he had anointed as the king.

Cāṇakya was a man of firm resolve. He had no qualms in adopting all kinds of tricks were they to lead to the success of his mission. He had set up a network of spies. He kept everything under his close watch. He was one of the greatest, if not the greatest, of the politicians that India has produced. He was a master strategist, an astute tactician and a cunning diplomat, the qualities that made him a legendary figure. He uprooted the powerful Nanda dynasty practically single handed with absolutely no resources. That he could stand against the well-entrenched and well-organized State apparatus and replace it with that of his own speaks volumes of his diplomatic manoeuvers and of his ruthlessness in pursuing his goal which did not admit any taboo. He met intrigue by superior intrigue, cut the underhand move by still deeper underhand move and extirpating the last of the scions of the then ruling dynasty installed his protégé on the Pāṭaliputra throne. He is termed as the Mechiavelli of India. Perhaps he was more than that. A penniless Brahmin, a virtual pauper, he rose to be the maker of one of the greatest of the empires of his time thus ensuring

for himself the pride of place in the annals of the world. All the diplomacy, all the political skill, all the administrative acumen were for him the means to achieve the well-being of the populace the service to which was to him the primary objective of his life. Morality and ethics in his philosophy were not divorced from diplomatic skill and political sagacity. The unsocial and unruly elements had to be suppressed so that morality and ethics could prosper. The State apparatus for this had to be in top gear, well-spruced, eternally vigilant in a position to meet the enemies of society on their own ground to defeat their nefarious designs. That was the philosophy he propounded in his inimitable text on Polity, the *Arthaśāstra*, and that is also precisely the philosophy he espoused through verses in the *Cāṇakyanīti* or the *Cāṇakyarājanīti* which puts forth in succinct form what is contained in the *Arthaśāstra*.

As a great political thinker and administrator Cāṇakya won fulsome encomia from ancient writers. He is frequently cited by authors on Nīti and Kathā literatures like Daṇḍin in his *Daśakumāracarita*, Viṣṇuśarman in his *Pañcatantra* and so on and referred to by such celebrities as Bāṇa, Varāhamihira and Somadeva. Kāmandaki, the author of the *Nītisāra* offers him reverential salutations in the beginning of his work. The *Viṣṇu-purāṇa* refers to him under the name Kauṭilya in the future tense, the Brahmin Kauṭilya will uproot the nine Nandas after which the Mauryas will rule over (lit. enjoy) the earth : ततश्च नव चैतान् नन्दान् कौटिल्यो ब्राह्मणः समुद्धरिष्यति, तेषामभावे मौर्याः पृथिवीं भोक्ष्यन्ति (XXIV. 20-24). The *Bhāgavata-purāṇa* too makes a reference to the uprooting of the Nandas to be carried out by; it does not refer to Kauṭilya or Cāṇakya by name; it just says a Brahmin, नव नन्दान् द्विजः कश्चित् प्रपन्नान् उद्धरिष्यति (XII. I. 11-12)

Cāṇakya is said to have continued, even after the installation of his protégé on the throne with his austere living

in consonance with the Brahmin class to which he belonged, denying himself the comforts and luxuries that the State power could have provided him. This is how the chamberlain of Candragupta Maurya on reaching his house describes it:

अहो राजाधिराजमन्त्रिणो विभूतिः—

उपलशकलमेतद् भेदकं गोमयानां
बटुभिरुपहृतानां बर्हिषां स्तूपमेतत्।
शरणमपि समिद्भिः शुष्यमाणाभिराभि—
र्विनमितपटलान्तं दृश्यते जीर्णकुड्यम्।। (III.15)

"O the affluence of the minister of the king of kings!

Here is seen a piece of stone to break the cow-dung cakes with; there appears a heap of Kuśa grass collected by young disciples; the shed too is seen with dilapidated walls and the corners of the roof are borne down with yonder sacrificial fagots that are drying."

Cāṇakya's austere living is an indicator of his dislike for power and pelf and his incorruptability. That made him an embodiment of high moral values. A popular legend about him would bear it out. On taking up the assignment as Greek envoy at Pāṭaliputra, Megasthenes expressed his wish to meet Cāṇakya. The appointment was fixed late evening. Cāṇakya at that time was looking through some official papers. A lamp was on. As Megasthenes entered his chamber, it was put out and another one in its place was lit. When Megasthenes wanted to know as to why this was done, Cāṇakya told him that when the earlier lamp was on he was looking through official papers. The oil in it was at State expense. Now that he was receiving him as a personal guest, the oil in it has to be at his personal expense. Hence the earlier lamp was put out and the new one was lit in its place. This was Cāṇakya's character. It is for no reason, therefore, that he was able to, in spite of his being a poor Brahmin with no material resources, set up one of the greatest of the empires of the time.

Behind the insult meted out to him there is a story which it would not be out of place to recount here. King Nanda of Pāṭaliputra had a minister of the name of Śakaṭāra. The king got angry with him for some reason. He put him in prison along with his wife and son. In the prison only a bowlful of barley powder was given to all the three as food. Thinking that none could survive with that the wife and the son decided that they would go without food and it is Śakaṭāra who would help himself with the barley powder. After some time the wife and the son perished with emaciated Śakaṭāra surviving.

Here the story takes a different turn. One day the king was going somewhere. From the other side was coming a palace maid. The king laughed. On seeing him laughing the maid also laughed. The king asked her as to why she was laughing. She said that because he was laughing she also started laughing. The king asked her as to why he was laughing. The perplexed maid could not answer him and said she needed time to answer his query. Finding nobody in a position to give a proper answer, she thought of approaching Śakaṭāra in the prison. Śakaṭāra put her a few simple questions. One of these was: What was the king looking at when he laughed? The other was what thing was in the proximity of the place where the king laughed. To the first the answer of the maid was that it was a water channel. To the other the maid's answer was that it was a big tree. Śakaṭāra said that a small seed of the tree was floating in the channel. This amused the king in that the seed that could give rise to a big tree could just float down the channel. With this explanation the maid approached the king who felt surprised for that indeed was the case. That cannot be the brainchild of the maid; she being too unintelligent to hit upon the explanation; some one else must be behind it, argued he to himself. Enquiries revealed that it was Śakaṭāra who was behind it. The king felt sorry that he had put in prison such an intelligent person. He ordered his release.

Though out of the prison, Śakaṭāra nursed serious grievance against the king for all the misery that he had inflicted on him. One day when he was going somewhere he noticed a man pouring buttermilk into the roots of the Kuśa grass. On being asked he told him that the blade of the Kuśa had pierced his foot. He had learnt from texts of botany that if buttermilk is poured into the root of it, it would just get burnt and would not grow again. Thinking that he would be of use to him, Śakaṭāra brought him along to the city.

On release from the prison the king had put Śakaṭāra in charge of the Department of rituals. It was the time of the Śrāddha, the offerings to the manes. Śakaṭāra made all the arrangements for it as per his calling. To the ceremony he invited the man (whom he had brought along) along with other Brahmins and seated him in the front row. The man, it may be said, in passing, wore a hideous look. The ceremony on, the king entered the hall. When he saw the ugly person in the front row, he, out of sheer revulsion, dragged him out with others looking. The man then vowed that he would avenge the insult. The name of that man was Cāṇakya. He fulfilled his vow by exterminating the king and his clan. How he did it is all too familiar a story to need a recount.

There is another story that runs as follows: Mahāpadma Nanda, the ruler of Pāṭaliputra, had eignt sons on her queen and one on her maid Murā. The one on Murā was Candragupta who was the eldest of them all and thought himself to be the rightful heir to the throne and was thus an object of jealousy of the eight. Estranged Śakaṭāra and insulted Cāṇakya brought him over to their side by promising him kingship. Śakaṭāra asked a palace maid to cook poisoned food. By helping themselves with it Mahāpadma Nanda died along with his eight sons. Now, Cāṇakya laid a plan to install Candragupta as the ruler. He bought over a king of the name of Parvataka by promising him half the kingdom. His son was Malayaketu

and brother Vairocaka. He had five other Mleccha rulers as his allies.

Mahāpadma Nanda had in Rākṣasa a fiercely loyal minister. He was immensely sad at the death of Mahāpadma. He also tried to entice Parvataka with the same promise of half the kingdom. Parvataka fell in his trap. Cāṇakya got him killed through the device of poisonous girl, *viṣakanyā*. Terrified, Malayaketu made good his escape along with the five allies. The way was now clear for Candragupta Maurya to take over.

There is still another story: There was a king of the name of Ugradhanvan who added the word Nanda to his name. He had four ministers of whom Rākṣasa was the most intelligent. Sunandā was the name of his queen. There was a maid in the palace of the name of Murā. The king was very fond of her. Once a hermit visited the king. The water in which his feet were washed was besprinkled on those present. Eight drops of it fell on the queen and one on Murā with the result that the queen gave birth to eight sons and Murā one son. The eight sons were called Nandas while the one was called Candragupta who being far more intelligent than the others was an object of jealousy for them.

After the death of the king the eight got the throne.

Once a king of the Siṁhala country sent a lion in a cage of wax with the stipulation that any one taking out the lion without opening the cage would be pronounced the most intelligent. The Nandas were simply confused. Candragupta, however, with the heat of the fire had the wax melted with the lion jumping out of it. That was all the more reason for the Nandas to be jealous of him. They, just to spite him, assigned him the duty of looking after the rituals pertaining to gods and manes. He, to avenge the insult, made friends with Cāṇakya who had a very ugly look. Since the ceremonies were

under his charge, he invited Cāṇakya to the Śrāddha ceremony and offered him a seat in the front row. His repelling look enraged the Nandas who dragged him out. The rest of it is an all too familiar a story.

The style of the work under translation is very simple and lucid. The author adopts a number of techniques to express himself effectively. Sometimes he takes recourse to Simile, e.g.,

"एकेनापि सुपुत्रेण विद्यायुक्तेन साधुना आह्लादितं कुलं सर्वं यथा चन्द्रेण शर्वरी"

"Even with one good learned son the family feels happy like the night with the moon."

"मूर्खः ..... भिनत्ति वाक्यशल्येन ह्यदृष्टः कण्टको यथा।

"A fool pierces with the arrows of his words like an unseen thorn,'

रूपयौवनसम्पन्ना विशालकुलसम्भवाः।
विद्याहीना न शोभन्ते निर्गन्धा इव किंशुकाः।।

"Handsome and young, born in high families, if uneducated, do not look good like Kiṁśuka trees with no fragrance,"

दर्शनध्यानसंस्पर्शैर्यथा कूर्मी च पक्षिणी।
शिशुं पालयते नित्यं तथा सज्जनसंगतिः।।

"Just as a female fish rears its offspring by sight, a female tortoise by thinking about it and a female bird by touching, so does contact with good people (the human beings)."

Sometimes he takes recourse to Anyokti, a statement addressed to some one else, to hammer his point home, e.g.,

दानार्थिनो मधुकरा यदि कर्णतालै–
दूरीकृता करिवरेण मदान्धबुद्ध्या।

तस्यैव गण्डयुगमण्डनहानिरेषा
भृंगाः पुनर्विकचपद्मवने वसन्ति।।

"If the bees desirous of the rut are turned away by the flapping of the ears by the lordly elephant, blinded by intoxication, the loss is that of the ornamentation of its temples only. As for the bees, they take recourse to the bed of blooming lotuses."

The author of the present work is not just a preacher, he is also a poet who bedecks his verses with poetic make-up with all its charm. At the time of the recital of the prayers to the Lord, to the onomatopoeic sound *dhik tān dhik tān* of the inanimate tabor, the poet ascribes through his imaginative faculty a meaning. The Mṛdaṅga, according to him, seems to suggest that it is cursing in the course of narrations those with the words, fie upon them, fie upon them, who are

येषां श्रीमद्यशोदासुतपदकमले नास्ति भक्तिर्नराणां
येषामाभीरकन्याप्रियगुणकथने नानुरक्ता रसज्ञा।
येषां श्रीकृष्णलीलाललितरसकथासादरौ नैव कर्णौ
धिक् तान् धिक् तान् धिगेतान् कथयति सततं कीर्तनस्थो मृदंगः।।

१२.५

"not devoted to the lotus feet of the son of Yaśodā, whose tongue does not find delight in speaking about the lovely qualities of the cowherd damsels, whose ears are not attuned to [listening to] the lovely juicy stories of the playful activities of Śrī Kṛṣṇa."

Once a while the author goes in for the question and answer style to impart attractiveness to his statement, e.g,

विप्राऽस्मिन्नगरे महान् कथय कस्तालद्रुमाणां गणः
को दाता रजको ददाति वसनं प्रातर्गृहीत्वा निशि।

को दक्षः परदारवित्तहरणे सर्वोऽपि दक्षो जनः

कस्माज्जीवसि हे सखे! विषकृमिन्यायेन जीवाम्यहम्।। १२.६

"[A wayfarer on approaching a Brahmin in a city asks him] O Brahmin, tell me what is big in this city. [A] The grove of the palmyra trees. [Q] Who gives? [A] The washer-man who takes clothes in the morning and returns in the night. [Q] Who is skilled in taking away the wife of others and stealing their wealth? [A] Everybody. [Q] O friend, how are you passing your time? [A] I live like an insect in poison."

Occasionally he imparts his teaching with mention of just the figures, e.g.,

सिंहादेकं बकादेकं शिक्षेच्चत्वारि कुक्कुटात्।

वायसात् पञ्च शिक्षेच्च षट् शुनस्त्रीणि गर्दभात्।।

"One should learn one thing each from a lion and a crane, four from a cock, five from a crow, six from a dog and three from an ass."

The details of the figures he gives in subsequent verses.

Once a while the author emphasizes his teaching by underlining incongruities, e.g.,

हस्ती स्थूलतनुः स चाङ्कुशवशः किं हस्तिमात्रोऽङ्कुशो

दीपे प्रज्वलिते प्रणश्यति तमः किं दीपमात्रं तमः।

वज्रेणापि हताः पतन्ति गिरयः किं वज्रमात्रो गिरि–

स्तेजो यस्य विराजते स बलवान् स्थूलेषु कः प्रत्ययः।।

"An elephant has a big body, even that is controlled by goad. Is the goad of the size of an elephant? With the lighting of the lamp disappears darkness, is darkness of the size of lamp? With the stroke of the thunderbolt fall apart the mountains. Is mountain of the size of thunderbolt ? One who

has prowess is strong. How much can one rely on those that have massive figures?

Or the contrast:

व्यालाश्रयाऽपि विफलापि सकण्टकाऽपि,
वक्राऽपि पङ्किलभवाऽपि दुरासदाऽपि।
गन्धेन बन्धुरसि केतकि सर्वजन्तो–
रेको गुणः खलु निहन्ति समस्तदोषान्।।

O you the Ketaka plant, you are curved, you grow in a muddy place, you are not easy of access, snakes take recourse in you, you have no fruit, you have thorns, still you through your smell, are dear to all beings. Just one, single, good quality of yours cancels out all the bad ones.

One of the stylistic peculiarities of the work is occasional disorder in sequence. In the verse पत्रं नैव यदा करीरविटपे दोषो वसन्तस्य किं, the first line has the word दोष while the second and the third have the word दूषण. Similarly, in the verse नखिनां च नदीनाञ्च शृंगिणां दन्तिनां तथा। विश्वासो नैव कर्तव्यः स्त्रीषु राजकुलेषु च, नखिनां etc. are used in the Genitive while स्त्रीषु and राजकुलेषु are used in the Locative.

The author/compiler does not fight shy of repeating the same word should it serve to emphasize the point :

आपदर्थे धनं रक्षेद् दारान् रक्षेद् धनैरपि।
आत्मानं सततं रक्षेद् दारैरपि धनैरपि।।

He is conscious of the utility of his work. By going through it, says he, a person attains omniscience: येन विज्ञानमात्रेण सर्वज्ञत्वं प्रपद्यते, and comes to know what is good for him. In writing or compiling it he is actuated with the desire of doing good to people:

तदहं सम्प्रवक्ष्यामि लोकानां हितकाम्यया।

It was through the grace of God that I took up the translation of the remarkable work the *Cāṇakyanīti*. I bow to Him for this. Shri B.D. Mundhra, the well-known industrialist and philanthropist, extended his benign help in arranging for its publication. I am highly grateful to him for this. So am I to Shri Shankar Lal Somani and Shri Ajay Vikram Singh for providing assistance in its publication. I have a special word of gratitude for my dear friend Dr. Satya Vrat Varma of Shri Ganganagar who went through the proofs and offered valuable suggestions. I hope the translation will help the work reach the people at large to show the right path to society.

प्रथमोऽध्यायः
Chapter - 1

प्रणम्य शिरसा विष्णुं त्रैलोक्याधिपतिं प्रभुम्।
नानाशास्त्रोद्धृतं वक्ष्ये राजनीतिसमुच्चयम्।।१।।

तीनों लोकों के स्वामी प्रभु विष्णु को सिर नंवा के प्रणाम कर मैं अनेक शास्त्रों से संगृहीत 'राजनीतिसमुच्चय' की रचना कर रहा हूं।

I shall compose the text called *Rājanītisamuccaya*, culled from many a *śāstra,* with a bow to God Viṣṇu, the lord of the three worlds.

अधीत्येदं यथाशास्त्रं नरो जानाति सत्तमः।
धर्मोपदेशविख्यातं कार्याकार्यं शुभाशुभम्।।२।।

इसका विधिवत् अध्ययन कर श्रेष्ठ पुरुष धर्म का उपदेश देने वाले ग्रन्थों में (वेद, धर्मशास्त्रादि में) सुप्रसिद्ध शुभ और अशुभ तथा कार्य और अकार्य (=करने योग्य और न करने योग्य कामों) को जान जाता है।

By going through it as per the śāstric procedure a good man comes to know what needs to be done by him or not and what is good for him and not, which is well-known from the texts that instruct in Dharma.

तदहं सम्प्रवक्ष्यामि लोकानां हितकाम्यया।
येन विज्ञानमात्रेण सर्वज्ञत्वं प्रपद्यते।।३।।

मैं लोगों के हित की इच्छा से उस (शास्त्र का) प्रवचन करूंगा जिसे जानने भर से मनुष्य सर्वज्ञ बन जाता है।

With a view to doing good to the people I shall compose the text the mere knowledge of which would make the people omniscient.

मूर्खशिष्योपदेशेन दुष्टस्त्रीभरणेन च।
दुःखितैः सम्प्रयोगेण पण्डितोऽप्यवसीदति।।४।।

मूर्खशिष्यों को उपदेश देने से, दुष्ट (=खराब, दुराचारिणी, कटुभाषिणी आदि) स्त्रियों का भरण–पोषण करने से और दुःखी लोगों के साथ मेल जोल रखने से विद्वान् व्यक्ति भी अवसाद–ग्रस्त हो जाता है।

Even a wise man comes to grief by teaching dull students, by looking after bad women and by keeping company with the miserable.

दुष्टा भार्या शठं मित्रं भृत्यश्चोत्तरदायकः।
ससर्पे च गृहे वासो मृत्युरेव न संशयः।।५।।

दुष्ट पत्नी, धूर्त मित्र, जवाब देने वाला नौकर और सांप वाले घर में निवास साक्षात् मृत्यु हैं, (इसमें) सन्देह नहीं।

A bad wife, a treacherous friend, a servant who answers back, stay in a house having a snake in it are just death, no doubt.

आपदर्थे धनं रक्षेद् दारान् रक्षेद् धनैरपि।
आत्मानं सततं रक्षेद् दारैरपि धनैरपि।।६।।

आपत्ति के (समय के) लिये धन बचा कर रखे, धन देकर भी पत्नी का बचाव करे, धन और पत्नी देकर भी सदा अपनी रक्षा करे।

One should save money for use in adversity, should protect wife even at the cost of money and one's own self always (in all circumstances) even at the cost of money and wife.

आपदर्थे धनं रक्षेच्छ्रीमतां कुत आपदः।
कदाचिच्चलिता लक्ष्मीः सञ्चिताऽपि विनश्यति।।७।।

आपदाओं से निपटने के लिये धन बचा के रखे। धनवानों पर विपत्तियां कहां! यह सम्भव है कि चञ्चल लक्ष्मी (=धन–सम्पदा) इकट्ठा किये होने पर भी नष्ट हो जाय।

One should save money for adversity. Where are adversities for the wealthy? It is possible that the fickle wealth, even though accumulated, may vanish.

यस्मिन् देशे न सम्मानो न वृत्तिर्न च बान्धवाः।
न च विद्यागमः कश्चित्तं देशं परिवर्जयेत्।।८।।

जिस देश में न आदर हो, न जीविका, न बन्धु–बान्धव हों और न ही कोई विद्या का साधन, उस देश से दूर रहे।

One should keep away from that country where there is no respect, no means of livelihood, no relatives, no acquisition of some kind of knowledge or skill.

धनिकः श्रोत्रियो राजा नदी वैद्यस्तु पञ्चमः।
पञ्च यत्र न विद्यन्ते न तत्र दिवसं वसेत्।।९।।

जिस देश में धनी व्यक्ति, वेदज्ञ (वेदपाठी), राजा, नदी और वैद्य —ये पांच न हों, वहां एक दिन भी न रहे।

A place which does not have these five---a rich person, a Vedic scholar, a king, a river and the fifth one, a physician, one should not stay even for a day.

लोकयात्रा भयं लज्जा दाक्षिण्यं त्यागशीलता।
पञ्च यत्र न विद्यन्ते न कुर्यात् तत्र संस्थितिम्।।१०।।

जहां ये पांच न हों वहां न रहे– आजीविका के साधन, भय, (लोक) लाज, शालीनता, और त्यागशीलता।

One should not live there which does not have the following five—the means for livelihood, fear, modesty, civility and the nature to relinquish (= to give in charity).

जानीयात् प्रेषणे भृत्यान् बान्धवान् व्यसनागमे।
मित्रं चापत्तिकालेषु भार्यां च विभवक्षये।।११।।

नौकर चाकरों की पहिचान उन्हें भेजने (=काम पर लगाने) पर होती है, बन्धु–बान्धवों की कष्ट आ पड़ने पर, मित्र की आपदाओं के समय और पत्नी की सम्पत्ति न रहने पर।

The true nature of the servants is known when they are sent on an errand, the kinsmen when an adversity overtakes and wife when wealth goes away.

आतुरे व्यसने प्राप्ते दुर्भिक्षे शत्रुसंकटे।
राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति स बान्धवः।।१२।।

रोग होने पर, विपत्ति आने पर, अकाल पड़ने पर, शत्रुओं के द्वारा संकट खड़ा किये जाने पर, राजद्वार पर और श्मशान पर जो साथ निभाता है वही (असल में) बन्धु है।

He is a (true) friend who stands by one in disease, in adversity, in famine, in danger from enemies, at the royal gate and at the cremation ground.

यो ध्रुवाणि परित्यज्य ह्यध्रुवं परिषेवते।
ध्रुवाणि तस्य नश्यन्ति ह्यध्रुवं नष्टमेव हि।।१३।।

जो निश्चित है उसे छोड़ अनिश्चित के पीछे भागता है, वह निश्चित से हाथ धो बैठता है, अनिश्चित तो गुमा हुआ है ही।

One who pursues what is uncertain ignoring what is certain, loses the certain while the uncertain is lost [to him] already.

वरयेत् कुलजां प्राज्ञो विरूपामपि कन्यकाम्।
रूपवतीं न नीचस्य विवाहः सदृशे कुले।।१४।।

बुद्धिमान् (पुरुष) को चाहिये कि वह कुलीन कन्या का वरण करे (से विवाह करे) चाहे वह कुरूप क्यों न हो, न कि (किसी) नीच की रूपवती कन्या का। विवाह बराबर के कुल में होता है।

A wise man should marry a girl of a good family, though she be ugly, and not the one [the daughter] of a lowly person. Marriage has to be in a matching family.

नखिनां च नदीनाञ्च शृंगिणां शस्त्रपाणिनाम्।
विश्वासो नैव कर्तव्यः स्त्रीषु राजकुलेषु च।।१५।।

नाखून वालों का, नदियों का, सींग वालों का, हाथ में हथियार लिये हुओं का, स्त्रियों एवं राजपरिवारों का कभी विश्वास नहीं करना चाहिये।

One should never trust those with claws/nails and horns and those with arms in hand, [as also] the rivers, the women and the members of the royal households.

विषादप्यमृतं ग्राह्यममेध्यादपि काञ्चनम्।
नीचादप्युत्तमां विद्यां स्त्रीरत्नं दुष्कुलादपि।।१६।।

विष से भी अमृत, अपवित्र {स्थान} से भी सुवर्ण, नीच से भी उत्तम विद्या और निकृष्ट कुल से भी उत्तम स्त्री को ले लेना चाहिये।

One should accept nectar even from poison, gold even from filth, knowledge even from a lowly person and a jewel of a woman even from a lowly family.

आहारो द्विगुणः स्त्रीणां बुद्धिस्तासां चतुर्गुणा।
षड्गुणोऽध्यवसायश्च कामश्चाष्टगुणः स्मृतः।।१७।।

स्त्रियों का भोजन (पुरुषों की अपेक्षा) दो गुना होता है, बुद्धि उनकी उनसे चौगुनी होती है, साहस छः गुना होता है और कामवासना आठ गुना।

The diet of a woman is twice, the intellect four times, the boldness, the courage six times and sex drive eight times [that of man].

द्वितीयोऽध्याय:
Chapter - 2

अनृतं साहसं माया मूर्खत्वमतिलुब्धता।
अशौचत्वं निर्दयत्वं स्त्रीणां दोषाः स्वभावजाः।।१।।

असत्य–भाषण, जल्दबाज़ी, छल--कपट, मूर्खता, अत्यधिक लालच, अपवित्रता (और) निर्दयता ये दुर्गुण स्त्रियों में स्वभाव से ही (=जन्मजात) होते हैं।

To speak untruth, rashness, deceitfulness, foolishness, excessive greediness, impurity and cruelty are the bad traits that women have in them by their very nature.

भोज्यं भोजनशक्तिश्च रतिशक्तिर्वरांगना।
विभवो दानशक्तिश्च नाल्पस्य तपसः फलम्।।२।।

भोजन, उसे (पचाने की) शक्ति, कामोपभोग की शक्ति, श्रेष्ठ स्त्री, सम्पत्ति और दान देंने का सामर्थ्य– ये कम तपस्या का फल नहीं हैं।

Food, the capacity to digest it, the sex drive, a good woman, wealth and the urge to charity-- are not the result of limited austerity.

यस्य पुत्रो वशीभूतो भार्या छन्दानुगामिनी।
विभवे यस्य सन्तुष्टिस्तस्य स्वर्ग इहैव हि।।३।।

जिसका पुत्र आज्ञाकारी है, पत्नी उसके इच्छानुसार चलने वाली है जो अपने धन में ही सन्तुष्ट है, उसके लिये यहीं (इस लोक में ही) स्वर्ग है।

He whose son is obedient, whose wife acts as per his wish and who is contented with whatever he has, for him the heaven is here (=in this world) itself.

ते पुत्रा ये पितुर्भक्ताः स पिता यस्तु पोषकः।
तन्मित्रं यस्य विश्वासः सा भार्या यत्र निर्वृतिः।।४।।

पुत्र वे ही हैं जो पिता के भक्त होते हैं, पिता वही है जो (सन्तान का) पालन–पोषण करता है, मित्र वही है जिस पर विश्वास है, पत्नी वही है जिससे सुख मिलता है।

They are [the real] sons who are devoted to their father, father is one who brings up [the off-spring], a friend is one who can be trusted, a wife is one who gives happiness.

परोक्षे कार्यहन्तारं प्रत्यक्षे प्रियवादिनम्।
वर्जयेत् तादृशं मित्रं विषकुम्भं पयोमुखम्।।५।।

पीठ पीछे जो कार्य को बिगाड़े (और) सामने पड़ने पर मीठी–मीठी बातें करे उस मित्र को दूर रखना चाहिये। वह ज़हर का (ऐसा) घड़ा है जिसके ऊपरी भाग में दूध भरा है।

One should keep away from a friend who harms the mission in one's absence, but talks sweetly when face to face. He is a jar of poison with milk in its upper portion.

न विश्वसेत् कुमित्रे च मित्रे चाति न विश्वसेत्।
कदाचित् कुपितं मित्रं सर्वं गुह्यं प्रकाशयेत्।।६।।

निकम्मे (=धूर्त) मित्र पर विश्वास न करे, और मित्र पर (भी) अधिक विश्वास न करे। ऐसा न हो कि क्रोध में आने पर मित्र सब रहस्य खोल कर रख दे।

One should not trust a bad friend, nor should repose too much of trust [even in good] friend lest [the] friend in a fit of rage were to lay bare all the secrets.

मनसा चिन्तितं कार्यं वचसा न प्रकाशयेत्।
मन्त्रेण रक्षयेद् गूढं कार्ये चापि नियोजयेत्।।७।।

मन में जो कार्य सोच रखा हो उसे शब्दों द्वारा प्रकट न करे (=किसी से कहे नहीं)। अपनी सोच में ही उसे छिपाये रखे और उसे कार्यान्वित कर दे।

One should not reveal through words (talk about) an action one has in mind. One should keep it secret in his counsel and apply it to one's mission.

कष्टं च खलु मूर्खत्वं कष्टं च खलु यौवनम्।
कष्टात्कष्टतरं चैव परगेहनिवासनम्।।८।।

मूर्खता निश्चय ही कष्टकारक है, यौवन भी सचमुच कष्टकारक है। इनसे भी अधिक कष्टकारक है दूसरे के घर में रहना।

Painful is foolishness, painful indeed is young age, more painful than that is living in some one else's house.

शैले शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे गजे।
साधवो नहि सर्वत्र चन्दनं न वने वने।।९।।

हर पर्वत में माणिक्य (लाल रत्न) नहीं होता, मोती हर हाथी में नहीं पाया जाता। सज्जन सब जगह नहीं मिलते। चन्दन हर जंगल में नहीं होता।

Ruby is not found in every mountain, pearl is not met with in every elephant, good people are not found everywhere, sandalwood is not found in every forest.

पुत्राश्च विविधैः शीलैर्नियोज्याः सततं बुधैः।
नीतिज्ञाः शीलसम्पन्ना भवन्ति कुलपूजिताः।।१०।।

बुद्धिमान् लोगों को चाहिये कि वे अपने पुत्रों को निरन्तर अनेक प्रकार के शीलों (=सद्‌गुणों) से युक्त करें। नीति–निपुण एवं शील–सम्पन्न वे कुल में (=परिवार में) सत्कार के पात्र हो जाते हैं।

The wise should always inculcate in their sons good qualities of different types. Possessed of good qualities, they, cognizant of proper behaviour, win for themselves adoration in the family.

माता शत्रुः पिता वैरी येन बालो न पाठितः।
न शोभते सभामध्ये हंसमध्ये बको यथा।।११।।

वह माता शत्रु है और पिता वैरी है जिसने पुत्र को पढ़ाया नहीं। वह सभा के बीच जंचता नहीं है जैसे कि हंसों के बीच बगुला।

That mother is enemy, that father is foe who did not educate the child. He does not fit in an assembly like a crane among swans.

लालनाद् बहवो दोषास्ताडनाद् बहवो गुणाः।
तस्मात् पुत्रं च शिष्यं च ताडयेन्नतु लालयेत्।।१२।।

लाड लड़ाने में बहुत दोष हैं, ताड़ने में (= कस कर रखने में) बहुत गुण। इसलिये पुत्र और शिष्य को लाड़ न लड़ाये अपितु कस कर रखे।

Indulgence is the [root] cause of many an evil. Control leads to [the evolution] of many a quality. Hence one should

not be indulgent to a son or a pupil. One should instead exercise strict control over them.

श्लोकेन वा तदर्धेन पादेनैकाक्षरेण वा।
अवन्ध्यं दिवसं कुर्याद् दानाध्ययनकर्मभिः।।१३।।

एक श्लोक या उसके आधे भाग या उसके एक पाद या उसके एक अक्षर द्वारा (=को पढ़ने से) एवञ्च दान और अध्ययन (आदि) कार्यों द्वारा दिन को अनिष्फल (=सार्थक) बनाये।

One should make a day not unuseful (fruitful) by repeating a [full] verse, or a half thereof, or a quadrant of it or a word from it or by such activities as charity and study.

कान्तावियोगः स्वजनापमानः
ऋणस्य शेषं कुनृपस्य सेवा।
दरिद्रभावो विषमा सभा च
विनाग्निमेते प्रदहन्ति कायम्।।१४।।

प्रियतमा से बिछोह, बन्धुजनों से अपमान, बचा हुआ उधार, नीच राजा की सेवा, दरिद्रता तथा अविवेकियों की सभा—ये बिना आग के शरीर को जलाते हैं।

Separation from the beloved, insult from kinsmen, remainder of debt, serving a bad king, poverty and the assembly of the non-judicious singe the body even though there is no fire.

नदीतीरेषु ये वृक्षाः परगेहेषु कामिनी।
मन्त्रिहीनाश्च राजानः शीघ्रं नश्यन्त्यसंशयम्।।१५।।

नदी के तीर पर के वृक्ष, दूसरे के घरों में (रहने वाली) स्त्री और बिना मन्त्रियों के राजा निःसन्देह शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

Trees on the banks of a river, a woman in the household of others and kings with no ministers come to naught, for sure, in all quickness.

विद्या बलं च विप्राणां राज्ञां सैन्यं बलं तथा।
वित्तं बलं च वैश्यानां शूद्राणां परिचर्यिका।।१६।।

विद्या ब्राह्मणों का बल है, राजाओं का बल सेना है, धन वैश्यों का बल है और शूद्रों का बल सेवा है।

Knowledge is the strength of Brahmins, army is that of kings, wealth is that of Vaiśyas and service to others is that of Śūdras.

निर्धनं पुरुषं वेश्या प्रजा भग्नं नृपं त्यजेत्।
खगा वीतफलं वृक्षं भुक्त्वा चाभ्यागता गृहम्।।१७।।

दरिद्र पुरुष को वेश्या, पराजित राजा को प्रजा, फलहीन वृक्ष को पक्षी और भोजन कर चुकने पर अतिथि घर को छोड़ देते हैं।

A harlot forsakes a poor man, subjects a defeated (lit. broken) king, so do birds a tree with no fruits and guests a house on having had their meals.

गृहीत्वा दक्षिणां विप्रास्त्यजन्ति यजमानकम्।
प्राप्तविद्या गुरुं शिष्या दग्धारण्यं मृगास्तथा।।१८।।

दक्षिणा ली और ब्राह्मणों ने यजमान को तिलाञ्जलि दी, पढ़ लिया और शिष्यों ने गुरु से नाता तोड़ा और जंगल जला तो हिरणों ने उससे विदा ली।

The Brahmins have nothing to do with a Yajamāna (a person who employs a priest/s to perform a sacrifice for him

and pays him/them the requisite fee for it) after they have had their sacrificial fee, so have the students with a teacher after they have had their education and so do deer with a burnt out forest.

दुराचारी च दुर्दृष्टिर्दुरावासी च दुर्जनः।
यन्मैत्री क्रियते पुम्भिर्नरः शीघ्रं विनश्यति।।१६।।

दुराचारी, बुरी नज़र वाला, खराब जगह रहने वाला और दुष्ट– यदि इनसे मनुष्य मित्रता करता है तो वह शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

If people make friends with a person of evil conduct, evil eye, evil habitation, the wicked one, the person doing so comes to naught quickly.

समाने शोभते प्रीतिः राज्ञि सेवा च शोभते।
वाणिज्यं व्यवहारेषु दिव्या स्त्री शोभते गृहे।।२०।।

बराबरी के लोगों में प्रेम की शोभा है। राजा की सेवा में (ही) शोभा है। व्यवसायों में वाणिज्य और दिव्य स्त्री घर की शोभा हैं।

Friendship looks good among equals. So does service to king, trade among professions and a divine (= noble) woman in house.

तृतीयोऽध्यायः
Chapter – 3

कस्य दोषः कुले नास्ति व्याधिना को न पीडितः।
व्यसनं केन न प्राप्तं कस्य सौख्यं निरन्तरम्।।१।।

ऐसा कौन है जिसके कुल में खोट न हो, ऐसा कौन है जो रोग से पीड़ित न हो, ऐसा कौन है जिस पर विपत्ति न आई हो, ऐसा कौन है जिसे निरन्तर सुख ही सुख मिलता रहा हो।

Which family is there that does not have its loophole/s? Who is there who has not suffered ailment? Who is there who has not met with an adversity? Who has had happiness endlessly?

आचारः कुलमाख्याति देशमाख्याति भाषणम्।
सम्भ्रमः स्नेहमाख्याति वपुराख्याति भोजनम्।।२।।

आचरण से कुल का पता चलता है, वाणी से देश का, [=कौन किस देश का है यह उसकी बोली से पता चल जाता है], घबराहट से स्नेह का और शरीर से भोजन का।

The conduct reveals the family, the speech the country, the agitation the affection, the body the food.

सुकुले योजयेत्कन्यां पुत्रं विद्यासु योजयेत्।
व्यसने योजयेच्छत्रुं मित्रं धर्मे नियोजयेत्।।३।।

कन्या को अच्छे कुल में दे, पुत्र को विद्याओं में लगाये, शत्रु को मुसीबत में धकेल दे, (अक्षरार्थ–आपत्ति से जोड़ दे) और मित्र को धर्म की ओर उन्मुख करे।

One should marry daughter in a good family, arrange for education of son in [different] disciplines, expose an enemy to adversity, and unite a friend with Dharma.

दुर्जनस्य च सर्पस्य वरं सर्पो न दुर्जनः।
सर्पो दशति कालेन, दुर्जनस्तु पदे पदे।।४।।

दुर्जन और सांप में सांप अच्छा है न कि दुर्जन। सांप तो कभी–कभी डसता है पर दुर्जन हर कदम पर।

Between a snake and a wicked person, it is the serpent which is better. Serpent bites ever and anon but a wicked person does so at every step.

एतदर्थं कुलीनानां नृपाः कुर्वन्ति सङ्ग्रहम्।
आदिमध्यावसानेषु न त्यजन्ति च ते नृपम्।।५।।

राजा लोग इसलिये कुलीन लोगों को अपने पास रखते हैं क्योंकि वे आरम्भ में, बीच में और अन्त में राजा को नहीं छोड़ते।

It is for this reason that kings bring to them good people in that they would not forsake them in the beginning, the middle and the end (i.e. they would always be loyal to them).

प्रलये भिन्नमर्यादा भवन्ति किल सागराः।
सागरा भेदमिच्छन्ति प्रलयेऽपि न साधवः।।६।।

सुनने में आता है कि– प्रलयकाल में समुद्र अपनी मर्यादा तोड़ देते हैं (=अपने तट की सीमा से बाहर आ जाते हैं, अक्षरार्थ– अपने तट को तोड़ डालते हैं), समुद्रों में तो तोड़ने की इच्छा है पर सज्जनों में तो प्रलय में भी वह नहीं होती।

The oceans assuredly break their bounds (=overflow their banks) at the time of doom. The oceans may nurse the

wish to break but not the good people even at the time of the doom.

मूर्खस्तु परिहर्तव्यः प्रत्यक्षो द्विपदः पशुः।
भिनत्ति वाक्यशल्येन ह्यदृष्टः कण्टको यथा।।७।।

सामने दीख रहे दो पांवों वाले पशु रूप मूर्ख को परे रखना चाहिये। वह न दिखाई देने वाले कांटे के समान वाग्बाण से छेद डालता है।

A fool, a biped animal in visible form, needs to be kept away. He pierces with verbal dart as does an invisible thorn.

रूपयौवनसम्पन्ना विशालकुलसम्भवाः।
विद्याहीना न शोभन्ते निर्गन्धा इव किंशुकाः।।८।।

सुन्दर और जवान, उच्च कुल में उत्पन्न, यदि विद्याविहीन हैं, तो सुहाते नहीं (अच्छे नहीं लगते) गन्धविहीन किंशुक के वृक्षों की तरह।

Handsome and young, born in high families, if uneducated, would look no good like the Kiṁśuka trees with no fragrance.

कोकिलानां स्वरो रूपं स्त्रीणां रूपं पतिव्रतम्।
विद्या रूपं कुरूपाणां क्षमा रूपं तपस्विनाम्।।९।।

कोयलों का सौन्दर्य उनकी (मीठी) कूक है, स्त्रियों का सौन्दर्य उनका पतिव्रता होना है, कुरूपों का सौन्दर्य उनकी विद्या है, तपस्वियों का सौन्दर्य क्षमा है।

The beauty of cuckoos is in their (sweet) cooing, that of women in their faithfulness and loyalty to their husbands, that of ugly ones in their knowledge and that of ascetics in forgiveness.

त्यजेदेकं कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत्।
ग्रामं जनपदस्यार्थे आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत्।।१०।।

कुल के लिये (=कुल को बचाने के लिये) एक (व्यक्ति) को, ग्राम के लिये (को बचाने के लिये) कुल को, राष्ट्र के लिये (को बचाने के लिये) ग्राम को [और], अपने लिये (=अपने को बचाने के लिये) पृथिवी को हाथ से जाने दे।

One should surrender one [person] for the sake of a family, the family for the sake of a village, the village for the sake of the country and the earth for one's own sake.

उद्योगे नास्ति दारिद्यं जपतो नास्ति पातकम्।
मौने च कलहो नास्ति नास्ति जागरिते भयम्।।११।।

उद्योग (=पुरुषार्थ) करने पर दरिद्रता नहीं रहती, जप करने वाले के लिये पाप का अस्तित्व नहीं है, मौन रहने पर लड़ाई–झगड़ा नहीं होता, जागने वाले के पास भय नहीं फटकता।

With exertion there is no poverty. One who offers silent prayer incurs no sin. In silence there is no quarrel. For one who is wide-awake there is no fear.

अतिरूपेण वै सीता ह्यतिगर्वेण रावणः।
अतिदानं बलिर्दत्वा अति सर्वत्र वर्जयेत्।।१२।।

अत्यधिक सौन्दर्य के कारण सीता, अति गर्व (=घमण्ड) के कारण रावण, अति दान के कारण बलि (नष्ट हुए)। (मनुष्य को) अति का सर्वत्र परिहार करना चाहिये।

Sītā with excessive beauty, Rāvaṇa with excessive pride and Bali with excessive charity [courted trouble]. [Hence] one should avoid extremes in all cases.

कोऽतिभारः समर्थानां कि दूरं व्यवसायिनाम्।
को विदेशः सविद्यानां कः परः प्रियवादिनाम्।।१३।।

तगड़े लोगों के लिये कौन सा भार अधिक है, उद्यमियों के लिये कौन सा स्थान दूर है, विद्वानों के लिये कौन सा (देश) विदेश है, मीठे बोल बोलने वालों के लिये कौन पराया है।

What excessive weight is there for those possessed of strength, what is distant for the energetic, what is a foreign country for the learned [and] who is alien for the one with sweet tongue.

एकेनापि सुवृक्षेण पुष्पितेन सुगन्धिना।
वासितं तद्वनं सर्वं सुपुत्रेण कुलं यथा।।१४।।

एक भी अच्छे फूलों से लदे सुगन्धित वृक्ष से सारा जंगल महक उठता है जैसे कि एक अच्छे पुत्र से कुल।

Even with one good fragrant tree laden with flowers the whole forest gets fragrant like a family with a good son.

एकेन शुष्कवृक्षेण दह्यमानेन वह्निना।
दह्यते तद्वनं सर्वं कुपुत्रेण कुलं यथा।।१५।।

आग से जलते हुए केवल एक सूखे पेड़ से सारा जंगल जल जाता है जैसे कि निकम्मे पुत्र से कुल।

Just as with one dry tree being burnt by fire the whole forest gets burnt, in the same way a family with a bad son.

एकेनापि सुपुत्रेण विद्यायुक्तेन साधुना।
आह्लादितं कुलं सर्वं यथा चन्द्रेण शर्वरी।।१६।।

एक भी सज्जन पढ़े लिखे सुपुत्र से सारा कुल आह्लादित हो उठता है जैसे कि चन्द्रमा से रात्रि।

Even with a single educated noble son the whole family gets elated (=brightened) as does get the night with the moon.

किं जातैर्बहुभिः पुत्रैः शोकसन्तापकारकैः।
वरमेकः कुलालम्बी यत्र विश्राम्यते कुलम्।।१७।।

शोक और सन्ताप देने वाले बहुत से पुत्रों के पैदा होने से क्या। एक भी हो पर हो कुल का सहारा, जहां कुल को शान्ति मिले, वह अच्छा।

What has one to do with a number of sons who cause [only] sorrow and affliction. A single one who could be the support, the one wherefrom the family can draw comfort is better.

लालयेत् पञ्च वर्षाणि दश वर्षाणि ताडयेत्।
प्राप्ते तु षोडशे वर्षे पुत्रं मित्रवदाचरेत्।।१८।।

पांच वर्ष तक लाड लड़ाये, [अगले] दस वर्ष तक कस के रखे, जैसे ही सोलहवां वर्ष लगे, पुत्र के साथ मित्र का व्यवहार करे।

Up to five years one should fondle a child. [For the next] ten years one should exercise control over him. As soon as he enters the sixteenth year he (= the father) should [start] treating him, like a friend.

उपसर्गे ऽन्यचक्रे च दुर्भिक्षे च भयावहे।
असाधुजनसम्पर्के यः पलायेत् स जीवति।।१९।।

आधिदैविक आपदाओं के आने पर, शत्रु द्वारा आक्रमण किये जाने पर, भयंकर अकाल पड़ने पर तथा दुष्टों से साबका पड़ने पर जो भाग लेता है वह ज़िन्दा रहता है।

One who makes good one's escape in the face of a natural calamity, the attack by an enemy, the terrible famine and in dealing with the wicked people, lives on.

धर्मार्थकाममोक्षाणां यस्यैकोऽपि न विद्यते।
जन्मजन्मनि मर्त्येषु मरणं तस्य केवलम्।।२०।।

मनुष्यों में जिसके पास धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इनमें से एक भी नहीं है, जनम–जनम में केवल मृत्यु ही उसके हाथ लगती है।

Of Dharma, Artha, Kāma and Mokṣa one who does not have even one, gets only death among mortals birth after birth.

मूर्खा यत्र न पूज्यन्ते धान्यं यत्र सुसञ्चितम्।
दम्पत्योः कलहो नास्ति तत्र श्रीः स्वयमागता।।२१।।

जहां मूर्खों का सम्मान नहीं, अनाज का जहां सञ्चय है, पति–पत्नी में परस्पर में कलह नहीं, लक्ष्मी वहां स्वयं आ जाती है।

Where the fools are not adored, where there is a good store of food-grains, where the couples do not quarrel fortune comes there herself (= smiles).

चतुर्थोऽध्यायः
Chapter - 4

आयुः कर्म च वित्तं च विद्या निधनमेव च।
पञ्चैतानि हि सृज्यन्ते गर्भस्थस्यैव देहिनः।।१।।

प्राणी अभी गर्भ में ही होता है कि उसके लिये इन पांच की सृष्टि हो जाती है— आयु, कर्म, धन, विद्या और मृत्यु।

While a being is still in womb the following five are created for him—life span, action, wealth, knowledge and death.

साधुभ्यस्ते निवर्तन्ते पुत्रा मित्राणि बान्धवाः।
ये च तैः सह गन्तारस्तद्धर्मात्सुकृतं कुलम्।।२।।

पुत्र, मित्र और बन्धुजन सज्जनों से विमुख हो जाते हैं (अक्षरार्थ— हट जाते हैं)। जो उनके साथ चलने वाले हैं (=उनके बताये मार्ग का अनुसरण करने वाले हैं) उनके धर्म अर्थात् पुण्य के प्रभाव से कुल कृतकृत्य हो जाता है।

Sons, friends and relatives turn away from the good people. Those who get along with them, it is through their merit that the family gets fulfilled.

दर्शनध्यानसंस्पर्शैर्मत्सी कूर्मी च पक्षिणी।
शिशुं पालयते नित्यं तथा सज्जनसंगतिः।।३।।

जिस प्रकार मछली देखने से, कछुई चिन्तन से तथा मादा पक्षी छूने से बच्चे को पालती है वैसे ही श्रेष्ठ पुरुषों की संगति [मनुष्यों को]।

Just as a female fish rears its offspring by sight, a female tortoise by [just] thinking about it and a female bird by touching it, so does contact with good people [the human beings].

यावत्स्वस्थो ह्ययं देहो यावन्मृत्युश्च दूरतः।
तावदात्महितं कुर्यात् प्राणान्ते किं करिष्यति।।४।।

जब तक यह शरीर स्वस्थ है (सही सलामत है), जब तक मौत दूर है तब तक अपना हित साध ले, प्राण निकल जाने पर क्या कर पायेगा।

So long as this body is in good health and death is at a distance, one should do what is good for oneself; with life gone, what shall one be able to do ?

कामधेनुगुणा विद्या ह्यकाले फलदायिनी।
प्रवासे मातृसदृशी विद्या गुप्तं धनं स्मृतम्।।५।।

विद्या में कामधेनु का गुण है। वह असमय में फल दे देती है। प्रवास में वह माता के समान है। विद्या गुप्त धन मानी गई है।

Knowledge has in it the quality of the desire-yielding cow. It yields fruit even when there is no season for it. In foreign sojourn it acts like mother. Knowledge is accepted as a secret treasure.

वरमेको गुणी पुत्रो निर्गुणैश्च शतैरपि।
एकश्चन्द्रस्तमो हन्ति न च तारागणैरपि।।६।।

सैकड़ों गुणहीन पुत्रों की अपेक्षा एक गुणवान् पुत्र अच्छा। अकेला चंद्रमा अंधेरा दूर करता है तारों का झुंड नहीं।

Even a single meritorious son is better than hundreds of them with no merit. A single moon dispels darkness and not the multitude of stars.

मूर्खश्चिरायुर्जातोऽपि तस्माज्जातमृतो वरः।
मृतः स चाल्पदुःखाय यावज्जीवं जडो दहेत्।।७।।

दीर्घायु मूर्ख (पुत्र) उत्पन्न होने की अपेक्षा मरा हुआ पुत्र पैदा हुआ अच्छा। मरा हुआ तो थोड़ा कष्ट देता है, मूर्ख जीवन भर (जी) जलाता है।

It is better to have a still-born [son] than the one born foolish. The still-born one gives a modicum of pain. The foolish one burns the whole life.

कुग्रामवासः कुलहीनसेवा कुभोजनं क्रोधमुखी च भार्या।
पुत्रश्च मूर्खो विधवा च कन्या विनाग्निना षट् प्रदहन्ति कायम्।।८।।

निकृष्ट ग्राम में निवास, नीच कुल के व्यक्ति की सेवा (=नौकरी), निकम्मा भोजन, गुस्सैल पत्नी, मूर्ख पुत्र और विधवा कन्या—ये छह बिना अग्नि के शरीर को जलाते हैं।

Living in a petty village, service to a low born person, bad food, irascible wife, foolish son and a widowed daughter—these six singe the body even when there is no fire.

किं तया क्रियते धेन्वा या न दोग्ध्री न गुर्विणी।
कोऽर्थः पुत्रेण जातेन यो न विद्वान् न भक्तिमान्।।९।।

उस गाय का क्या करना जो न तो दूध देती है और न ही गर्भ धारण करती है [जिससे उसके कोई बच्चा हो सके]। उस पुत्र के पैदा होने से क्या लाभ जो न तो विद्वान् है और न ही भक्तिमान्।

What has one to do with a cow that neither yields milk nor gets pregnant (so that it can give birth to a calf). What has one to do with a son who is neither wise nor devoted?

संसारतापदग्धानां त्रयो विश्रान्तिहेतवः।
अपत्यं च कलत्रं च सतां संगतिरेव च।।१०।।

सांसारिक तापों से जले हुओं को इन तीन से आराम मिलता है– सन्तान, पत्नी और सज्जनों के साथ उठना–बैठना।

For those burnt with the heat of mundane affliction there are three means of repose—offspring, wife and association with the good.

सकृज्जल्पन्ति राजानः सकृज्जल्पन्ति पण्डिताः।
सकृत्कन्याः प्रदीयन्ते त्रीण्येतानि सकृत् सकृत्।।११।।

राजा लोग एक ही बार बोलते हैं, विद्वान् लोग (भी) एक ही बार बोलते हैं। कन्याएं एक ही बार दी जाती हैं। ये तीनों बातें एक–एक बार ही होती हैं।

The kings speak but once, so do the learned men. Girls are given in marriage but once. All these three take place but once.

एकाकिना तपो द्वाभ्यां पठनं गायनं त्रिभिः।
चतुर्भिर्गमनं क्षेत्रं पञ्चभिर्बहुभी रणः।।१२।।

तप अकेले होता है, पढ़ना दो से, गाना तीन से, यात्रा चार से, खेती पांच से और युद्ध बहुतों से (बहुत लोगों को साथ लेकर) होता है।

Penance is performed all by oneself, study by two together, singing by three in the same way, travel by four in the same manner, cultivation likewise with five and battle with so many put together.

सा भार्या या शुचिर्दक्षा सा भार्या या पतिव्रता।
सा भार्या या पतिप्रीता सा भार्या सत्यवादिनी।।१३।।

पत्नी वह है जो पवित्र हो, चतुर हो, पतिव्रता हो, पति को अच्छी लगती हो, सच बोलने वाली हो।

That one is [a good] wife who is pure, efficient, devoted to husband, liked by him and is truthful.

अपुत्रस्य गृहं शून्यं दिशः शून्यास्त्वबान्धवाः।
मूर्खस्य हृदयं शून्यं सर्वशून्या दरिद्रता।।१४।।

जिसके पुत्र नहीं उसका घर सूना है, बिना बन्धु–बन्धवों के दिशाएं सूनी हैं, मूर्ख का दिल सूना होता है, दरिद्रता में सब कुछ सूना ही सूना है।

For one not blessed with a son the house is as good as barren. So are the quarters with no kinsmen. The heart of a fool is barren [with no sentiments or emotion]. In poverty every thing is barren.

अनभ्यासे विषं शास्त्रमजीर्णे भोजनं विषम्।
विषं सभा दरिद्रस्य वृद्धस्य तरुणी विषम्।।१५।।

बिना अभ्यास के शास्त्र विष है [विष के समान है], अपच में भोजन विष है, दरिद्र के लिये सभा विष है और बूढ़े के लिये जवान औरत विष है।

Śāstra without repeated study is poison, eating in indigestion is poison, an assembly for the poor is poison, a young woman for an old man is poison.

त्यजेद्धर्मं दयाहीनं विद्याहीनं गुरुं त्यजेत्।
त्यजेत् क्रोधमुखीं भार्यां निःस्नेहान् बान्धवांस्त्यजेत्।।१६।।

जिस धर्म में दया नहीं उसे छोड़ दे, विद्याविहीन गुरु, गुस्सैल पत्नी तथा स्नेह–शून्य बन्धुओं को दूर रखे।

One should give up Dharma if it is devoid of compassion, keep away from a teacher if he has no learning, the same

should he do with an irascible wife and the kinsmen who lack affection.

अध्वा जरा मनुष्याणां वाजिनां बन्धनं जरा।
अमैथुनं जरा स्त्रीणां वस्त्राणामातपो जरा।।१७।।

मनुष्यों को मार्ग (=अत्यधिक पैदल चलना) बुढ़ापा ला देता है, घोड़ों को उन्हें बांधे रखना बूढ़ा बना देता है, स्त्रियों को सम्भोग न करना उन्हें बुढ़िया बना देता है, वस्त्रों के लिए धूप वृद्धावस्था अर्थात् उन्हें जीर्ण–शीर्ण करने वाली होती है।

The road (=long journey on foot) is old age for men, tying up is so for horses, non-coitus is so for women and the sun is so for clothes.

कः कालः कानि मित्राणि को देशः कौ व्ययाऽऽगमौ।
कश्चाहं का च मे शक्तिरिति चिन्त्यं मुहुर्मुहुः।।१८।।

कैसा समय है, कौन मित्र है, कौन सा देश है, आमदनी और खर्चा क्या है, मैं कौन हूं, मेरी शक्ति क्या है, इस पर बार–बार विचार करना चाहिये।

One should think about these again and again: What time it is, who are friends, which country it is, what are the income and expenditure, who I am and how much is my strength.

जनिता चोपनेता च यस्तु विद्यां प्रयच्छति।
अन्नदाता भयत्राता पञ्चैते पितरः स्मृताः।।१९।।

जन्म–दाता, उपनयन करने वाला, विद्या प्रदान करने वाला, अन्न देने वाला तथा भय से बचाव करने वाला – ये पांच पिता कहें गये हैं।

One who begets (him), one who performs the investiture ceremony with the sacred thread, one who imparts knowledge, one who provides food and one who affords protection from fear are taken to be fathers.

राजपत्नी गुरोः पत्नी मित्रपत्नी तथैव च।
पत्नीमाता स्वमाता च पञ्चैता मातरः स्मृताः।।२०।।

राजा की पत्नी, गुरु की पत्नी, मित्र की पत्नी, पत्नी की माता (सास) तथा अपनी माता– ये पांच माताएं कही गई हैं।

The wife of the king, the wife of the teacher, the wife of a friend, the mother of the wife, (the mother-in-law), and one's own mother are said to be mothers.

अग्निर्देवो द्विजातीनां मुनीनां हृदि दैवतम्।
प्रतिमा स्वल्पबुद्धीनां सर्वत्र समदर्शिनाम्।।२१।।

ब्राह्मणों के लिये अग्नि देवता है, मुनियों के हृदय में देवता है, कम अक्ल वालों के लिये मूर्ति देवता है, समद्रष्टाओं के लिये सब जगह देवता ही देवता है।

For Brahmins fire is the deity. The deity is in the heart of the sages. For those with little intellect the image/idol is the deity. For those viewing equally the deity is everywhere.

पञ्चमोऽध्यायः
Chapter - 5

गुरुरग्निर्द्विजातीनां वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः।
पतिर्देवो गुरुः स्त्रीणां सर्वस्याऽभ्यागतो गुरुः।।१।।

द्विजों का गुरु अग्नि है, वर्णों का गुरु ब्राह्मण है। स्त्रियों का गुरु पति है, अतिथि सब का गुरु है।

Fire is the guru of the twice-born, the Brahmin that of the castes, husband that of women, guests of that of everybody.

यथा चतुर्भिः कनकं परीक्ष्यते निघर्षणच्छेदनतापताडनैः।
तथा चतुर्भिः पुरुषः परीक्ष्यते त्यागेन शीलेन गुणेन कर्मणा।।२।।

जिस तरह चार (प्रकार) से, घिस कर, काट कर, तपा कर और पीट कर सोने की परख की जाती है उसी प्रकार चार प्रकार से, त्याग, शील, गुण और कर्म से पुरुष को परखा जाता है।

Just as gold is tested in four ways; by rubbing, cutting, burning and beating; in the same way is a man tested in four ways: self-abnegation, good conduct, quality and action.

तावद् भयेषु भेतव्यं यावद् भयमनागतम्।
आगतं तु भयं दृष्ट्वा प्रहर्त्तव्यमशंकया।।३।।

भय से तब तक डरना चाहिये जब तक वह आया न हो। जब वह आ जाय तो उसे देख बिना हिचक वार कर देना चाहिये।

One should be scared of fear till it does not come. Having seen it come, one should strike decisively (lit. without hesitation).

एकोदरसमुद्भूता एकनक्षत्रजातकाः।
न भवन्ति समाः शीले यथा बदरकण्टकाः।।४।।

एक पेट के जाये, एक नक्षत्र में उत्पन्न हुए गुण–कर्म–स्वभाव में एक समान नहीं होते जैसे बेरी के फल (बेर) और उसके कांटे।

Come out of the same womb and born under the same constellation do not match each other in nature like the jujube fruits and their thorns.

निःस्पृहो नाधिकारी स्यान्नाकामी मण्डनप्रियः।
नाऽविदग्धः प्रियं ब्रूयात् स्फुटवक्ता न वञ्चकः।।५।।

निर्लोभी व्यक्ति अधिकारी नहीं हो सकता, जो कामुक नहीं वह सजने–संवरने में रुचि नहीं रखता, जो समझदार नहीं वह मीठे बोल नहीं बोलता, साफ़–साफ़ बात कहने वाला धोखेबाज़ नहीं होता।

One who has no aspiration would not hold office, one who is not lustful would not like make-up, one who is not shrewd would not utter sweet words, one who does plain speaking is not a cheat.

मूर्खाणां पण्डिता द्वेष्या अधनानां महाधनाः।
वारांगनाः कुलस्त्रीणां सुभगानां च दुर्भगाः।।६।।

मूर्ख विद्वानों से द्वेष रखते हैं, निर्धन धनियों से, कुलांगनाएं वेश्याओं से और कुरूप रूपवानों से।

Fools hate the learned, the poor the rich, the high-born women the harlots, the ugly the good-looking.

आलस्योपहता विद्या परहस्तगताः स्त्रियः।
अल्पबीजं हतं क्षेत्रं हतं सैन्यमनायकम्।।७।।

आलस्य से विद्या नष्ट हो जाती है, दूसरे के हाथों में पड़ी स्त्रियां नष्ट हो जाती हैं (बच नहीं पाती), कम बीज वाला क्षेत्र नष्ट हो जाता है और बिना नायक वाली सेना बेसहारा हो जाती है।

Indolence drives away knowledge, women are lost when fallen in others' hands, a field with less seeds is of no use (= does not yield full produce), doomed is the leaderless army.

अभ्यासाद्धार्यते विद्या कुलं शीलेन धार्यते।
गुणेन ज्ञायते त्वार्यः, क्रोधो नेत्रेण गम्यते।।८।।

अभ्यास से विद्या प्राप्त की जाती है, कुल शील से बना रहता है, श्रेष्ठ पुरुष की पहिचान गुण से होती है, क्रोध नेत्र से जाना जाता है।

Knowledge rests on practice, a family on good conduct. A noble man is known by his qualities. Anger is inferred through eyes.

वित्तेन रक्ष्यते धर्मो विद्या योगेन रक्ष्यते।
मृदुना रक्ष्यते भूपः सत्स्त्रिया रक्ष्यते गृहम्।।९।।

धन से धर्म की रक्षा होती है, विद्या की योग (अभ्यास) से, नरमी से राजा की और सती साध्वी स्त्री से घर की।

It is money that protects Dharma, Yoga (application) the knowledge, softness the king, the good woman the family.

अन्यथा वेदपाण्डित्यं शास्त्रमाचारमन्यथा।
अन्यथा कुवचः शान्तं लोकाः क्लिश्यन्ति चान्यथा।।१०।।

वेदपाण्डित्य को और तरह लेने वाले, शास्त्रोक्त आचार की अन्यथा [व्याख्या करने वाले], शान्त व्यक्ति को अन्यथा [=व्यर्थ में] कुवचन (बोलने वाले) लोग अन्यथा (व्यर्थ में ही) कष्ट पाते हैं।

Interpreting the scholarship in Veda in a different manner, as also the conduct as prescribed in Śāstras, speaking bad words for no reason to a peaceful person, people needlessly subject themselves to torment.

दारिद्र्यनाशनं दानं शीलं दुर्गतिनाशनम्।
अज्ञाननाशिनी प्रज्ञा भावना भयनाशिनी।।११।।

दान दरिद्रता को दूर करता है, शील दुर्गति को, बुद्धि अज्ञान को और भावना भय को।

Charity takes away poverty, good conduct misfortune, intelligence ignorance and faith fear.

नास्ति कामसमो व्याधिर्नास्ति मोहसमो रिपुः।
नास्ति कोपसमो वह्निर्नास्ति ज्ञानात्परं सुखम्।।१२।।

काम के समान और कोई व्याधि (=बीमारी) नहीं है, मोह के समान और कोई शत्रु नहीं है, क्रोध के समान और कोई आग नहीं है, ज्ञान से बड़ा और कोई सुख नहीं है।

There is no disease worse than sensuousness, no enemy worse than delusion, no fire worse than anger, no happiness better than knowledge.

जन्ममृत्युं हि यात्येको भुनक्त्येकः शुभाशुभम्।
नरकेषु पतत्येक एको याति परां गतिम्।।१३।।

व्यक्ति अकेला ही जन्म लेता है और अकेला ही मरता है। अकेला ही शुभ और अशुभ भोगता है, अकेला ही नरकों में जाता है और अकेला ही परमगति को प्राप्त होता है।

One takes birth and dies alone, alone one experiences what is good and bad, goes to hells alone [and] attains the highest goal alone.

तृणं ब्रह्मविदः स्वर्गस्तृणं शूरस्य जीवितम्।
जिताक्षस्य तृणं नारी निःस्पृहस्य तृणं जगत्।।१४।।

ब्रह्मज्ञानी के लिये स्वर्ग तुच्छ (अक्षरार्थ — तिनका, – नगण्य) है, शूरवीर के लिये जीवन तुच्छ है, जितेन्द्रिय के लिये नारी तुच्छ है, निःस्पृह (निराकांक्ष) के लिये जगत् तुच्छ है।

For the realized soul the heaven is inconsequential (lit. one who has realized Brahman the heaven is like a straw), so is life for the brave, a woman for the self-controlled and the world for the one who has given up desires.

विद्या मित्रं प्रवासेषु भार्या मित्रं गृहेषु च।
व्याधितस्यौषधं मित्रं धर्मो मित्रं मृतस्य च।।१५।।

विदेश में रहने पर विद्या मित्र होती है, घर में पत्नी मित्र होती है। रोगी की मित्र औषध है और मृत व्यक्ति का मित्र धर्म होता है।

Knowledge acts as friend in foreign visits, wife is friend at home, for the sick medicine is friend, for the dead Dharma is friend.

वृथा वृष्टिः समुद्रेषु वृथा तृप्तेषु भोजनम्।
वृथा दानं धनाढ्येषु वृथा दीपो दिवापि च।।१६।।

समुद्रों में वृष्टि व्यर्थ है, भरपेट खा चुकने वालों के लिये भोजन व्यर्थ है, धनाढ्यों को दान देना व्यर्थ है, दिन के समय दीया व्यर्थ है।

Rain in ocean is waste. So are feeding the satiated, charity to the rich and the lamp during the day.

नास्ति मेघसमं तोयं नास्ति चात्मसमं बलम्।
नास्ति चक्षुःसमं तेजो नास्ति धान्यसमं प्रियम्।।१७।।

मेघ के समान और कोई जल नहीं है, आत्मबल के समान और कोई बल नहीं है। नेत्र के समान और कोई तेज नहीं है और अनाज के समान और कोई प्रिय नहीं है।

There is no water like the clouds, no strength like the (power of) self, no luminous thing like the eye, nothing dearer than the grains.

अधना धनमिच्छन्ति वाचं चैव चतुष्पदाः।
मानवाः स्वर्गमिच्छन्ति मोक्षमिच्छन्ति देवताः।।१८।।

निर्धन धन के इच्छुक हैं, चौपाये (पशु) वाणी के, मनुष्य स्वर्ग के और देवता मोक्ष के।

The poor aspire for wealth, the animals for speech, the men for heaven and the deities for salvation.

सत्येन धार्यते पृथ्वी सत्येन तपते रविः।
सत्येन वाति वायुश्च सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम्।।१९।।

सत्य पृथ्वी को धारण किये हुए है, सत्य से सूर्य तपता है, सत्य से वायु बहती है, सब कुछ सत्य पर टिका है।

The earth rests on truth, through truth the Sun radiates the heat, through truth blows the wind. Everything rests on truth.

चला लक्ष्मीश्चलाः प्राणाश्चलं जीवितयौवने।
चलाचले च संसारे धर्म एको हि निश्चलः।।२०।।

लक्ष्मी चञ्चल है, प्राण चञ्चल हैं, जीवन और यौवन चञ्चल हैं, इस अत्यन्त चल (=अस्थिर) संसार में एक धर्म ही ऐसा है जो निश्चल (=स्थिर) है।

Lakṣmī is inconstant, so are the breath, the life and the youth. In this extremely inconstant world it is *dharma* that is constant.

नराणां नापितो धूर्तः पक्षिणां चैव वायसः।
चतुष्पदां शृगालस्तु स्त्रीणां धूर्ता च मालिनी।।२१।।

मनुष्यों में नाई चालाक होता है, पक्षियों में कौआ, पशुओं में सियार तथा स्त्रियों में मालिन।

Of men a barber is cunning, of birds it is crow, of animals it is jackal and of women it is the lady gardener.

षष्ठोऽध्यायः
Chapter – 6

श्रुत्वा धर्मं विजानाति श्रुत्वा त्यजति दुर्मतिम्।
श्रुत्वा ज्ञानमवाप्नोति श्रुत्वा मोक्षमवाप्नुयात्[1]।।१।।

(वेदादि शास्त्रों को सुनकर व्यक्ति) धर्म को जानता–समझता है, कुबुद्धि को छोड़ता है, ज्ञान प्राप्त करता है, (और) मोक्ष पा सकता है।

After listening to scriptures one comes to know Dharma, gives the go by to evil intentions, attains knowledge and can get salvation.

पक्षिणां काकश्चाण्डालः पशूनां चैव कुक्कुरः।
कोपी मुनीनां चाण्डालः सर्वेषां चैव निन्दकः।।२।।

पक्षियों में कौवा, पशुओं में कुत्ता और मुनियों में क्रोधी [मुनि], और (मनुष्यों में) जो निन्दक है वह चाण्डाल है।

Of birds it is crow who is Cāṇḍāla (=wicked), of animals it is dog, of sages it is the fiery one, of all it is the one who defames.

भस्मना शुध्यते कांस्यं ताम्रमम्लेन शुध्यति।
रजसा शुध्यते नारी नदी वेगेन शुध्यति।।३।।

कांसे का पात्र राख से शुद्ध होता है, तांबे का पात्र इमली अथवा खटाई से, स्त्री रजस्वला होने से एवं नदी वेग (=तीव्र गति से बहने) से।

Bell metal is cleansed with ashes, brass with acid, a woman with menstruation, [and] a river with speed.

भ्रमन् सम्पूज्यते राजा भ्रमन् सम्पूज्यते द्विजः।
भ्रमन् सम्पूज्यते योगी स्त्री भ्रमन्ती विनश्यति।।४।।

भ्रमण करने वाला राजा (अपनी प्रजा में) आदर पाता है, भ्रमण करने वाला ब्राह्मण (देश–विदेश में) सम्मान प्राप्त करता है, भ्रमण करने वाला योगी सम्मान पाता है, (किन्तु) भ्रमण करने वाली (=इधर उधर घूमने वाली) स्त्री नष्ट हो जाती है (=किसी काम की नहीं रहती)।

A king on the move gains respect, so do a Brahmin and a Yogi, but a woman doing so comes to naught.

तादृशी जायते बुद्धिर्व्यवसायोऽपि तादृशः।
सहायास्तादृशा एव यादृशी भवितव्यता।।५।।

होनी जिस तरह की होती है उसी तरह की बुद्धि हो जाती है, प्रयास वैसा ही हो जाता है, साथी भी वैसे ही मिल जाते हैं।

Whatever type of destiny, that type would turn the mind, that type would be the exertion, that type would be the companions.

कालः पचति भूतानि कालः संहरते प्रजाः।
कालः सुप्तेषु जागर्त्ति कालो हि दुरतिक्रमः।।६।।

काल प्राणियों को मृत्यु के निकट ले जाता है (अक्षरार्थ– पकाता है), काल लोगों का संहार करता है। जब लोग सोये रहते हैं तो काल जागता रहता है। काल का पार पाना कठिन है।

Time brings beings close to death, it destroys them. It keeps awake while others are asleep. It is difficult to overstep Time.

न पश्यति च जन्मान्धः कामान्धो नैव पश्यति।
न पश्यति मदोन्मत्तो ह्यर्थी दोषान् न पश्यति।।७।।

जन्म से अन्धा नहीं देखता, काम से अन्धा हुआ नहीं देखता, मद से पागल हुआ नहीं देखता, याचक हानिकारक परिस्थितियों को नहीं देखता।

One born blind does not see, so do the ones blinded by passion and intoxicated with pride. A suppliant does not notice the evils.

स्वयं कर्म करोत्यात्मा स्वयं तत्फलमश्नुते।
स्वयं भ्रमति संसारे स्वयं तस्माद्विमुच्यते।।८।।

जीव स्वयं कर्म करता और स्वयं ही उसका फल भोगता है। स्वयं संसार में चक्कर काटता है और स्वयं ही उससे मुक्त हो जाता है।

The self engages in action himself and reaps its reward himself. He wanders about in the world himself and gets released from it himself.

राजा राष्ट्रकृतं पापं राज्ञः पापं पुरोहितः।
भर्ता च स्त्रीकृतं पापं शिष्यपापं गुरुस्तथा।।६।।

राष्ट्र के किये पाप को राजा, राजा के किये पाप को [उसका] पुरोहित, स्त्री के द्वारा किये गये पाप को [उसका] पति तथा शिष्य के द्वारा किये गये पाप को [उसका] गुरु [भोगते हैं]।

The sin committed by the country goes to the king, that committed by the king goes to [his] priest, that committed by a woman to her husband and that committed by a pupil to [his] teacher.

ऋणकर्ता पिता शत्रुर्माता च व्यभिचारिणी।
भार्या रूपवती शत्रुः पुत्रः शत्रुरपण्डितः।।१०।।

ऋण लेने वाला पिता शत्रु है, व्यभिचारिणी माता शत्रु है, रूपवती पत्नी शत्रु है, मूर्ख पुत्र शत्रु है।

A father incurring debt is an enemy, so are an adulteress mother, pretty wife and an unlearned son.

लुब्धमर्थेन गृह्णीयात् स्तब्धमञ्जलिकर्मणा।
मूर्खं छन्दोऽनुवृत्तेन यथार्थत्वेन पण्डितम्।।११।।

लालची को धन से बस में करे, घमण्डी को हाथ जोड़कर, मूर्ख को उसके इच्छानुसार काम करके और विद्वान् को सही सही बात कहकर।

One should win over a greedy person by greasing his palm, a haughty one by paying him regards, a fool one by going around his whims and a wise man by telling him the truth.

वरं न राज्यं न कुराजराज्यं वरं न मित्रं न कुमित्रमित्रम्।
वरं न शिष्यो न कुशिष्यशिष्यो वरं न दारा न कुदारदाराः।।१२।।

राज्य न होना अच्छा पर दुष्ट राजा का राज्य नहीं, मित्र का न होना अच्छा, पर निकृष्ट मित्र का होना नहीं, शिष्य का न होना अच्छा पर निकम्मे शिष्य का होना नहीं, पत्नी का न होना अच्छा पर निकम्मी पत्नी का नहीं।

It is better not to have kingdom but not the kingdom of a bad king, it is better not to have a friend than to have a bad one, it is better not to have a student than to have a bad one, it is better not to have wife than to have a bad one.

कुराजराज्येन कुतः प्रजासुखं कुमित्रमित्रेण कुतोऽस्ति निर्वृतिः।
कुदारदारैश्च कुतो गृहे रतिः कुशिष्यमध्यापयतः कुतो यशः।।१३।।

निकम्मे राजा के राज से प्रजा को सुख कहां, नीच मित्र से सुख–चैन कहां, निकृष्ट पत्नी से घर के प्रति आसक्ति कहां, निकम्मे शिष्य को पढ़ाने वाले को यश कहां?

How can the subjects of a bad king feel happy, how can there be peace of mind from a bad friend, how can there be attachment to home with repelling wife, how can there accrue fame to one who teaches a bad student?

सिंहादेकं बकादेकं शिक्षेच्चत्वारि कुक्कुटात्।
वायसात्पञ्च शिक्षेच्च षट् शुनस्त्रीणि गर्दभात्।।१४।।

सिंह से एक, बगुले से एक, मुर्गे से चार, कौए से पांच, कुत्ते से छः और गधे से तीन गुण ग्रहण करने चाहिये।

One should acquire one quality each from a lion and a crane, four of them from a cock, five of them from a crow, six of them from a dog and three of them from an ass.

प्रभूतं कार्यमल्पं वा यन्नरः कर्तुमिच्छति।
सर्वारम्भेण तत्कार्यं सिंहादेकं प्रचक्षते।।१५।।

कहते हैं कि सिंह से जो एक शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये वह है कि मनुष्य छोटा या बड़ा कोई भी कार्य करना चाहे तो उसके लिये पूरा ज़ोर लगा दे।

The first lesson that one has from a lion, as they say, is that whatever work, big or small, one wants to accomplish, one should put in all efforts for it.

इन्द्रियाणि च संयम्य बकवत् पण्डितो नरः।
देशकालबलं ज्ञात्वा सर्वकार्याणि साधयेत्।।१६।।

बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिये कि वह सभी इन्द्रियों को वश में कर बगुले के समान देश, काल और आत्मबल को परख सब कामों को पूरा करे।

A wise man should accomplish all things with a brake on his senses like a crane [weighing] the proper place, time and his own capacity.

प्रत्युत्थानं च युद्धं च संविभागं च बन्धुषु।
स्वयमाक्रम्य भुक्तं च शिक्षेच्चत्वारि कुक्कुटात्।।१७।।

यथा समय जागना, युद्ध (के लिये तैयार रहना), बन्धुजनों में बराबर–बराबर बांटना और स्वयं हमला करके खाना–ये चार (गुण) मुर्गे से सीखने चाहियें।

One should acquire four [qualities] from a cock: to wake up in time, (to be everready for) an assault, to distribute equally [what one has acquired] among his kith and kin, and eating [a thing attained] through self attack.

गूढं च मैथुनं धाष्ट्र्यं काले काले च संग्रहम्।
अप्रमत्तमविश्वासं पञ्च शिक्षेच्च वायसात्।।१८।।

छिप कर मैथुन करना, ढिठाई, समय–समय पर [चीज़ें] इकट्ठी करते रहना, प्रमाद न करना [=सावधान रहना], किसी पर विश्वास न करना– ये पांच गुण कौए से सीखने चाहियें।

One should learn the following five from a crow; coitus in secret, insolence, accumulation [of things] from time to time, alertness [and] non-trust.

बह्वाशी स्वल्पसन्तुष्टः सुनिद्रो लघुचेतनः।
स्वामिभक्तश्च शूरश्च षडेते श्वानतो गुणाः।।१६।।

भरपूर खाना, थोड़े से सन्तोष करना, पर्याप्त नींद लेना, हल्के से [खटके से] सजग हो जाना, स्वामिभक्ति और बहादुरी– ये छह गुण कुत्ते से (सीखने चाहियें)।

Eating in good quantity, feeling satisfied with a little, good sleep, getting alert even with [a feeble] sound, loyalty to master, bravery—these six are the qualities (that one should learn from) a dog.

सुश्रान्तोऽपि वहेद् भारं शीतोष्णं न च पश्यति।
सन्तुष्टश्चरते नित्यं त्रीणि शिक्षेच्च गर्दभात्।।२०।।

गधा कितना भी थका क्यों न हो तो भी भार उठाता है, सर्दी–गर्मी की परवाह नहीं करता, हमेशा सन्तुष्ट होकर घूमता–फिरता है– ये तीन [गुण] गधे से सीखने चाहियें।

One should acquire three qualities from an ass: however tired it may be, it goes on carrying load, does not care for cold or heat, moves about in all contentment.

य एतान् विंशतिगुणानाचरिष्यति मानवः।
कार्याऽवस्थासु सर्वासु अजेयः स भविष्यति।।२१।।

जो मनुष्य हर प्रकार का कार्य करते समय इन बीस गुणों का पालन करेगा वह अजेय हो जायेगा।

A person who follows these twenty qualities in the course of all types of his work, will become invincible.

सप्तमोऽध्यायः

Chapter – 7

अर्थनाशं मनस्तापं गृहे दुश्चरितानि च।
वञ्चनं चापमानं च मतिमान्न प्रकाशयेत्।।१।।

बुद्धिमान् को चाहिये कि वह धन–नाश, मन के सन्ताप, घर में हुए कुकृत्यों, ठगे जाने तथा अपमानित होने को प्रकट न करे (=सार्वजनिक न करे)।

A wise man should not make public loss of money, mental affliction, bad happenings at home, [and] getting cheated and insulted.

धनधान्यप्रयोगेषु विद्यासंग्रहणेषु च।
आहारे व्यवहारे च त्यक्तलज्जः सुखी भवेत्।।२।।

धन और धान्य का व्यापार, विद्योपार्जन एवञ्च आहार और व्यवहार में संकोच न करने वाला सुखी रहता है।

One who does not feel shy in financial and food-grain deals, acquisition of knowledge, eating and mutual dealings remains happy.

सन्तोषामृततृप्तानां यत्सुखं शान्तचेतसाम्।
न च तद् धनलुब्धानामितश्चेतश्च धावताम्।।३।।

सन्तोषरूपी अमृत से तृप्त शान्तचित्त वालों को जो सुख मिलता है वह इधर–उधर भटकने वाले धन लोलुपों को नहीं।

The happiness those fully satisfied with the nectar of contentment with peace in mind enjoy is not available to those who are greedy of wealth and run about here and there.

सन्तोषस्त्रिषु कर्तव्यः स्वदारे भोजने धने।
त्रिषु चैव न कर्तव्योऽध्ययने तपदानयोः।।४।।

अपनी पत्नी, भोजन और धन इन तीन चीज़ों में (मनुष्य को) सन्तोष करना चाहिये और अध्ययन, तप और दान इन तीन चीज़ों में वह नहीं करना चाहिये।

One should be satisfied with one's wife, meals and wealth. [Conversely] one should never be satisfied with study, austerities and charity.

विप्रयोर्विप्रवह्न्योश्च दम्पत्योः स्वामिभृत्ययोः।
अन्तरेण न गन्तव्यं हलस्य वृषभस्य च।।५।।

दो ब्राह्मणों, ब्राह्मण और अग्नि, पति–पत्नी, मालिक और नौकर, हल और बैल के बीच में होकर नहीं चलना चाहिये।

One should not walk in between two Brahmins, a Brahmin and fire, husband and wife, master and servant, the plough and the bull.

पादाभ्यां न स्पृशेदग्निं गुरुं ब्राह्मणमेव च।
नैव गां न कुमारीं च न वृद्धं न शिशुं तथा।।६।।

अग्नि, गुरु, ब्राह्मण, गाय, कुंआरी कन्या, वृद्ध, तथा शिशु की ओर पांव न करे।

One should not point feet towards fire, teacher, a Brahmin, a cow, a maiden, an old man and a child.

शकटं पञ्चहस्तेन दशहस्तेन वाजिनम्।
हस्तिनं शतहस्तेन देशत्यागेन दुर्जनम्।।७।।

गाड़ी को पांच हाथ, घोड़े को दस हाथ, हाथी को सौ हाथ [और] दुर्जन को यदि देश छोड़ना पड़ जाय [तो भी दूर रखना चाहिए]।

One should [keep away from] a cart to the distance of five hastas (a measure of length equal to 24 aṅgulas or about 18 inches), from a horse ten hastas, an elephant hundred hastas and a wicked man (even) by leaving the country.

हस्ती अंकुशहस्तेन वाजी हस्तेन ताड्यते।
शृंगी लगुडहस्तेन खड्गहस्तेन दुर्जनः।।८।।

हाथी हाथ में पकड़े हुए अंकुश से, घोड़ा हाथ (के चाबुक) से, सींग वाला पशु हाथ के डंडे से तथा दुर्जन हाथ की तलवार से वश में किया जाता है।

An elephant is brought under control by one with a goad in hand, a horse by one with [a leash] in hand, the being with horns by one with a rod in hand and a wicked man by one with sword in hand.

तुष्यन्ति भोजने विप्रा मयूरा घनगर्जिते।
साधवः परसम्पत्तौ खलः परविपत्तिषु।।९।।

ब्राह्मणों को भोजन में सन्तोष मिलता है, मोरों को बादलों के गर्जन में, सज्जनों को दूसरों की खुशहाली में और दुष्टों को दूसरों की बेहाली में।

Brahmins get delight in meals, the peacocks in thunder of clouds, the good people in the prosperity of others and the wicked people in the adversity of others.

अनुलोमेन बलिनं प्रतिलोमेन दुर्जनम्।
आत्मतुल्यबलं शत्रुं विनयेन बलेन वा।।१०।।

[अपने से] बलवान् को अनुकूलता से, दुर्जन को सख्ती से और अपने बराबर बल वाले शत्रु को, [स्थिति के अनुसार] विनय या बल (ताकत) से [जीतना चाहिये]।

One should overcome the powerful one by getting along with him, the wicked one by standing up against him [and] the enemy of equal strength by either humility or strength.

बाहुवीर्यं बलं राज्ञो ब्राह्मणो ब्रह्मविद् बली।
रूपयौवनमाधुर्यं स्त्रीणां बलमनुत्तमम्।।११।।

बाजुओं की ताकत राजा की ताकत है, वेदज्ञ ब्राह्मण बलवान् होता है, रूप, यौवन और माधुर्य स्त्रियों का सर्वोत्कृष्ट (=बेशकीमती) बल होता है।

The prowess of arms is the strength of king, that of a Brahmin versed in Veda is in knowledge [of the Vedic lore], beauty, sweetness and youth are the unsurpassed strength of women.

नात्यन्तं सरलैर्भाव्यं गत्वा पश्य वनस्थलीम्।
छिद्यन्ते सरलास्तत्र कुब्जास्तिष्ठन्ति पादपाः।।१२।।

मनुष्यों को बहुत अधिक सीधे नहीं होना चाहिये। जंगल में जा कर देखो। सीधे (चीड़ के) वृक्ष तो वहां काटे जाते हैं और टेढ़े–मेढ़े खड़े रहते हैं।

People should not be over simple. Go to a forest and see. Straight trees are lumbered there while the crooked ones stay put.

यत्रोदकं तत्र वसन्ति हंसा–
स्तथैव शुष्कं परिवर्जयन्ति।
न हंसतुल्येन नरेण भाव्यं
पुनस्त्यजन्ते पुनराश्रयन्ते।।१३।।

जल जहां होता है हंस वहां रहते हैं और (जल) सूख जाने पर वे उस स्थान को छोड़ देते हैं। मनुष्य को हंस की तरह नहीं होना चाहिये जोकि बार–बार कभी तो छोड़ते हैं और कभी आ जाते हैं।

Where there is water live there swans. They leave it when it dries up. A person should not be like a swan, some time leaving; some time coming.

उपार्जितानां वित्तानां त्याग एव हि रक्षणम्।
तडागोदरसंस्थानां परीवाह इवाम्भसाम्।।१४।।

तालाब के भीतर स्थित जलराशि के बहाव की तरह कमाये हुए धन का त्याग ही उसकी रक्षा है।

To part with the riches earned is their safety just as it is the draining of waters stored in a tank.

यस्यार्थास्तस्य मित्राणि यस्यार्थास्तस्य बान्धवाः।
यस्यार्थाः स पुमान् लोके यस्यार्थाः स च जीवति।।१५।।

जिसके पास धन है, मित्र भी उसी के ही बनते हैं; जिसके पास धन है, बन्धु–बान्धव भी उसी के होते हैं; जिसके पास धन है संसार उसी को पुरुष (मर्द) मानता है; जिसके पास धन है जीवित (ज़िन्दा) तो वही है।

One who has money has friends, one who has money has relatives, one who has money is counted a man in the world, one who has money is taken to be alive.

स्वर्गस्थितानामिह जीवलोके
चत्वारि चिह्नानि वसन्ति देहे।
दानप्रसंगो मधुरा च वाणी
देवार्चनं ब्राह्मणतर्पणं च।।१६।।

इस संसार में स्वर्ग में निवास करने वालों के चार चिह्न शरीर में पाये जाते हैं— दान में अपने को लगाना, मीठे बोल बोलना, देवपूजा करना और ब्राह्मणों को तृप्त करना।

There are four marks on the body [of the people] in this world [that go with those] who have their abode in heaven: devotion/commitment to charity, sweet speech, worship of gods and feeding the Brahmins to the full.

अत्यन्तकोपः कटुका च वाणी
दरिद्रता च स्वजनेषु वैरम्।
नीचप्रसंगः कुलहीनसेवा
चिह्नानि देहे नरकस्थितानाम्।।१७।।

शरीर में नरक वासियों के चिह्न होते हैं—भयंकर क्रोध, कड़वे बोल, दरिद्रता, बन्धुजनों से वैर, निकृष्ट लोगों की संगति (सोहबत), नीच कुल के लोगों की सेवा (=नौकरी)।

Too much of anger, harsh speech, poverty, hostility towards one's kith and kin, association with the lowly, service to those of low birth----are the marks [that people carry] in their body of those consigned to hell.

गम्यते यदि मृगेन्द्रमन्दिरं
लभ्यते करिकपोलमौक्तिकम्।
जम्बुकालयगते च प्राप्यते
वत्स-पुच्छ-खर-चर्म-खण्डनम्।।१८।।

यदि शेर की मांद में जाते हैं तो हाथी के गण्डस्थल से निकले मोती मिलते हैं, और यदि गीदड़ की मांद में जाते हैं तो बछड़े की पूंछ और गधे की चमड़ी के टुकड़े मिलते हैं।

If one goes to the lair of a lion one would find there the pearls from the temples of an elephant. If one were to go to the lair of a jackal, one would come across there the tail of a calf and pieces of ass' hide.

शुनः पुच्छमिव व्यर्थं जीवितं विद्यया विना।
न गुह्यगोपने शक्तं न च दंशनिवारणे।।१६।।

विद्या के बिना जीवन कुत्ते की पूंछ की तरह बेकार है जोकि न तो गुप्तांग को ही ढ़क सकती है और न ही मक्खी–मच्छर आदि जीवों को हटा सकती है।

Life without knowledge is as useless as the tail of a dog that can neither cover the private parts nor can it ward off the gad-flies.

वाचां शौचं च मनसः शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
सर्वभूते दया शौचमेतच्छौचं परार्थिनाम्।।२०।।

वाणी और मन की शुचिता (=पवित्रता) इन्द्रिय–निग्रह (=इन्द्रियों को बस में रखना) है। परोपकारियों की शुचिता सभी प्राणियों पर दया करना है।

The purity of speech and mind lies in the control of senses. The purity of those who help others lies in their being kind to all beings.

पुष्पे गन्धं तिले तैलं काष्ठेऽग्निं पयसि घृतम्।
इक्षौ गुडं तथा देहे पश्यात्मानं विवेकतः।।२१।।

पुष्प में गन्ध, तिल में तेल, लकड़ी में आग, दूध में घी, गन्ने में गुड़, शरीर में आत्मा को विवेक बुद्धि से देख लो।

See/Realise through discrimination smell in flower, oil in sesame seed, fire in wood, ghee in milk and soul in the body.

अष्टमोऽध्यायः

Chapter - 8

अधमा धनमिच्छन्ति धनं मानं च मध्यमाः।
उत्तमा मानमिच्छन्ति मानो हि महतां धनम्।।१।।

अधम (=नीच) कोटि के लोग धन चाहते हैं, बीच की कोटि के लोग सम्मान और धन दोनों चाहते हैं, उत्तम (=उत्कृष्ट) कोटि के लोग सम्मान चाहते हैं क्योंकि बड़े लोगों का धन सम्मान ही होता है।

The people of lower category aspire for wealth, of the middle category both wealth and respect, of the higher category [just] respect, for respect is the wealth of the great.

इक्षुरापः पयो मूलं ताम्बूलं फलमौषधम्।
भक्षयित्वाऽपि कर्तव्याः स्नानदानादिकाः क्रियाः।।२।।

ईख, जल, दूध, कन्द, पान, फल और, औषध का सेवन करने पर भी स्नान–दानादि क्रियाएं करनी चाहियें।

One should go in for such activities as having bath, giving gifts and so on even after [having] sugarcane, water, milk, roots, betel, fruit and medicine.

दीपो भक्षयते ध्वान्तं कज्जलं च प्रसूयते।
यदन्नं भक्षयेन्नित्यं जायते तादृशी प्रजा।।३।।

दीया अंधेरा खाता है, और काजल को जन्म देता है। जैसा अन्न (व्यक्ति) खाता है निश्चय ही वैसी उसकी सन्तान होती है।

Lamp eats (=removes) darkness and produces collyrium. The kind of food one helps oneself with, is born the progeny of that kind for sure.

वित्तं देहि गुणान्वितेषु मतिमन्नान्यत्र देहि क्वचित्
प्राप्तं वारिनिधेर्जलं घनमुखे माधुर्ययुक्तं सदा।
जीवान् स्थावरजंगमांश्च सकलान् सञ्जीव्य भूमण्डले
भूयः पश्य तदेव कोटिगुणितं गच्छन्तमम्भोनिधिम्।।४।।

अरे बुद्धिमान्, गुणी लोगों को धन दे, अन्य को किसी को नहीं। जब समुद्र का जल बादल के मुख में जाता है तो मधुर बन जाता है। भूलोक में सभी प्राणियों और स्थावर और जंगमों को जीवन प्रदान कर पुनः करोड़ गुणा बने हुए उसे समुद्र की ओर जाते हुए देख।

O the wise one, give money to the meritorious and never any time to others. The water of ocean entering into the clouds turns sweet. Infusing life into all the beings and things moving and unmoving, look at it going to the ocean again many times (lit. a crore times) multiplied.

चाण्डालानां सहस्रैश्च सूरिभिस्तत्त्वदर्शिभिः।
एको हि यवनः प्रोक्तो न नीचो यवनात् परः।।५।।

तत्त्वद्रष्टा (=जो असलियत जानते हैं) विद्वानों ने कहा है कि हज़ारों चाण्डालों के बराबर एक यवन होता है, यवन से बढ़कर और कोई नीच नहीं होता।

The wise who know the reality have proclaimed that even one Yavana is equal to thousands of Cāṇḍālas. There is no one more lowly than a Yavana.

तैलाभ्यंगे चिताधूमे मैथुने क्षौरकर्मणि।
तावद् भवति चाण्डालो यावत्स्नानं न चाचरेत्।।६।।

तेल की मालिश करने पर, चिता के धुएं का (स्पर्श करने पर), मैथुन करने पर और हजामत बनवाने पर व्यक्ति तब तक चाण्डाल बना रहता है जब तक वह नहाता नहीं।

After an oil massage, [inhaling] the smoke from the funeral pyre, copulation and shaving one continues to be an outcaste till one has had bath.

अजीर्णे भेषजं वारि जीर्णे वारि बलप्रदम्।
भोजने चामृतं वारि भोजनान्ते विषप्रदम्।।७।।

अपच के समय जल औषध का काम करता है, भोजन पच जाने के बाद जल ताकत देता है, खाना खाते समय जल (का सेवन) अमृत के समान है, खाना खा चुकने पर विषदायक है [ज़हर का काम करता है]।

In indigestion water is the medicine, with the digestion of food it imparts strength, it is nectar during meals and is poison at the end of them.

हतं ज्ञानं क्रियाहीनं हतश्चाज्ञानतो नरः।
हतं निर्णायकं सैन्यं स्त्रियो नष्टा ह्यभर्तृकाः।।८।।

आचरण में न लाया गया ज्ञान निरर्थक है। ज्ञान के अभाव में मनुष्य में कुछ रहता नहीं। नायक के बिना सेना बेसहारा हो जाती है। पतिहीन स्त्रियां बर्बाद हो जाती हैं।

Knowledge, if not put to use, is of no value. In the absence of knowledge a person is as good as dead. An army without a leader is helpless (is all gone). Women with no husbands are doomed.

वृद्धकाले मृता भार्या बन्धुहस्ते गतं धनम्।
भोजनं च पराधीनं तिस्रः पुंसां विडम्बनाः।।९।।

वृद्धावस्था में पत्नी की मृत्यु, रिश्तेदारों के हाथ में धन का चला जाना और भोजन दूसरों के हाथ में होना— पुरुषों की ये तीन विडम्बनाएं होती हैं।

The death of wife in old age, the passing of wealth in the hands of kinsmen and the meals dependent upon others are the three mortifications for men.

नाग्निहोत्रं विना वेदा न च दानं विना क्रिया।
न भावेन विना सिद्धिस्तस्माद् भावो हि कारणम्।।१०।।

अग्निहोत्र के बिना वेद नहीं हैं (=वेदाध्ययन व्यर्थ है), दान (=दक्षिणा) के बिना क्रिया (=यज्ञादिकर्म) नहीं हैं (=निष्फल) हैं, भाव (=भावना, प्रेम, भक्ति) के बिना सिद्धि (=सफलता) सम्भव नहीं है। इसलिये (समस्त सफलताओं) में कारण भाव ही है।

The [study of the Veda] has no meaning without the performance of the fire sacrifices, the sacrifice has no meaning without the gifts, without intent there is no success or accomplishment. Hence intent is the root cause of all [types] of success or accomplishments.

काष्ठपाषाणधातूनां कृत्वा भावेन सेवनम्।
श्रद्धया च तया सिद्धिस्तस्य विष्णुः प्रसीदति।।११।।

लकड़ी, पत्थर तथा धातुओं का प्रेम से सेवन करें, उस श्रद्धा से सिद्धि मिलती है। विष्णु उस (व्यक्ति) पर प्रसन्न रहते हैं।

One should use wood, stone and metals with adoration. That leads to success. Viṣṇu is happy with him [who does that].

न देवो विद्यते काष्ठे न पाषाणे न मृन्मये।
भावे हि विद्यते देवस्तस्माद् भावो हि कारणम्।।१२।।

भगवान् लकड़ी में नहीं हैं, न पत्थर में हैं और न मिट्टी की मूरत में। वे तो भावना में है। इसलिये भाव ही कारण है। अर्थात् जहां भावना हो वहीं वे हैं।

God is neither in wood, nor in stone, nor in image. He exists in feeling. Hence feeling is the cause [of His existence=He can be felt to exist anywhere].

शान्तितुल्यं तपो नास्ति न सन्तोषात्परं सुखम्।
न तृष्णायाः परो व्याधिर्न च धर्मो दयापरः।।१३।।

शान्ति के समान और कोई तप नहीं है, सन्तोष से बढ़कर और कोई सुख नहीं है, तृष्णा से बढ़कर और कोई रोग नहीं है और दया से बढ़कर और कोई धर्म नहीं है।

There is no better penance than tranquillity, no greater happiness than contentment, no worse disease than strong desire and no better Dharma than compassion.

गुणो भूषयते रूपं शीलं भूषयते कुलम्।
सिद्धिर्भूषयते विद्यां भोगो भूषयते धनम्।।१५।।

गुण रूप की सजावट है, शील कुल की, उपलब्धि विद्या की, और उपभोग धन की।

Quality bedecks beauty, good conduct bedecks family, accomplishment bedecks knowledge, putting to use bedecks wealth.

निर्गुणस्य हृतं रूपं दुःशीलस्य हृतं कुलम्।
असिद्धस्य हृता विद्या अभोगेन हृतं धनम्।।१६।।

गुणहीन का रूप व्यर्थ है, शीलहीन का कुल निन्दा का पात्र बनता है, सिद्धिहीन की विद्या निरर्थक है, बिना उपयोग में लाया गया धन किसी काम का नहीं।

The beauty of one with no virtues is of no consequence, the family of one of bad conduct gets bad repute, the knowledge of one who has not disciplined himself is just waste, the wealth, if not used, has no meaning.

शुचि भूमिगतं तोयं शुद्धा नारी पतिव्रता।
शुचिः क्षेमकरो राजा सन्तोषी ब्राह्मणः शुचिः।।१७।।

ज़मीन के नीचे का जल शुद्ध होता है, पतिव्रता नारी शुद्ध होती हैं, कल्याणकारी राजा शुद्ध होता है, सन्तोषी ब्राह्मण शुद्ध होता है।

Pure is the subterraneous water, pure is a woman devoted to her husband, pure is a king doing good, pure is a contented Brahmin.

असन्तुष्टा द्विजा नष्टा सन्तुष्टाश्च महीभुजः।
सलज्जा गणिका नष्टा निर्लज्जाश्च कुलाङ्गनाः।।१८।।

असन्तुष्ट ब्राह्मण, सन्तुष्ट राजा, लाज–शरम करने वाली वेश्या एवं निर्लज्ज (बेशरम) कुल स्त्रियां– ये सब नष्ट हो जाते हैं (=कहीं के नहीं रहते)।

Brahmins not having the sense of fulfilment, kings having the same, harlots feeling shy and high-born women with no sense of shame come to naught.

किं कुलेन विशालेन विद्याहीनेन देहिनाम्।
दुष्कुलीनोऽपि विद्वांश्च देवैरपि सुपूज्यते।।१६।।

मनुष्यों को उस उच्च कुल से क्या करना जिसमें विद्या नहीं है। यदि कोई नीच कुल में उत्पन्न हो पर हो विद्वान् तो देवगण भी उसका अच्छी तरह सत्कार करते हैं।

What has one to do with a high family where there is no education. One born in a low family, if learned, is adored even by gods.

विद्वान् प्रशस्यते लोके विद्वान् गच्छति गौरवम्।
विद्यया लभ्यते सर्वं विद्या सर्वत्र पूज्यते।।२०।।

विद्वान् की संसार में प्रशंसा होती है, विद्वान् को सम्मान मिलता है, विद्या से सब कुछ हासिल होता है, विद्या की सब जगह पूजा होती है।

A learned man wins admiration in the world, he gets honour, everything is obtained through knowledge, knowledge is revered everywhere.

मांसभक्षैः सुरापानैर्मूर्खैश्चाक्षरवर्जितैः।
पशुभिः पुरुषाकारैर्भाराक्रान्ता च मेदिनी।।२१।।

मांस खाने वाले, शराब पीने वाले, मूर्ख, जिन्हें एक अक्षर भी नहीं आता, शक्ल–सूरत भर के पुरुष (रूपी) पशुओं के भार से पृथिवी दबी पड़ी है।

The earth is weighed down with animals in human form who are meat-eaters, drunkards, the unlettered fools.

अन्नहीनो दहेद् राष्ट्रं मन्त्रहीनश्च ऋत्विजः।
यजमानं दानहीनो नास्ति यज्ञसमो रिपुः।।२२।।

अन्नहीन (यज्ञ) राष्ट्र को, [जिस यज्ञ में] मन्त्रोच्चारण नहीं होता वह ऋत्विजों को (यज्ञ करने वाले पुरोहितों को), [जिस यज्ञ में] दान नहीं दिया जाता वह यजमान (=जो यज्ञ कराता है) को जला डालता है। यज्ञ जैसा और कोई शत्रु नहीं है।

Without food it would burn (=ruin) the country, without incantations, Mantras, it would do so those who help in the performance of the sacrifice, so do again it would the one who arranges the sacrifice if it has no charity—there is no worse enemy than a sacrifice.

नवमोऽध्यायः

Chapter - 9

मुक्तिमिच्छसि चेत्तात विषयान् विषवत् त्यज।
क्षमार्जवं दयां शौचं सत्यं पीयूषवद् भज।।१।।

हे प्रिय, यदि मुक्ति चाहते हो तो विषयों (सांसारिक भोग पदार्थों) को विष के समान छोड़ दो एवञ्च क्षमा, सरलता, दया, शुचिता और सत्य को अमृत के समान अपना लो।

O dear, if you aspire for salvation, shun sense-objects like poison and go in for forbearance, straightforwardness, compassion, purity and truth as if they were nectar.

परस्परस्य मर्माणि ये भाषन्ते नराधमाः।
त एव विलयं यान्ति वल्मीकोदरसर्पवत्।।२।।

जो नीच मनुष्य एक दूसरे के मर्मों (भीतर के रहस्यों) को कहते हैं (=उद्घाटित करते हैं), वे निश्चय ही ऐसे नष्ट हो जाते हैं जैसे कि बांबी के बीच पड़ा सांप।

Those vile men who speak about (=disclose) each other's secrets come to naught, for sure, like a snake in an ant-hill.

गन्धः सुवर्णे फलमिक्षुदण्डे
नाकारि पुष्पं खलु चन्दनस्य।
विद्वान् धनाढ्यश्च नृपश्चिरायु–
र्धातुः पुरा कोऽपि न बुद्धिदोऽभूत्।।३।।

विधाता ने सोने में गन्ध, ईख में फल तथा चन्दन में पुष्प नहीं लगाये एवञ्च विद्वान् को धनाढ्य और राजा को दीर्घायु नहीं

बनाया। उसे पुराने समय में (=जब उसने सृष्टि बनाना प्रारम्भ किया होगा) कोई बुद्धि देने वाला नहीं मिला।

The Creator did not bestow fragrance on gold, fruit on sugarcane, flower on sandalwood, a person who may be learned but at the same time may also be rich, a king to have long life—there was none in the earlier ages who could tender him the [right] counsel.

सर्वौषधीनाममृता प्रधाना
सर्वेषु सौख्येष्वशनं प्रधानम्।
सर्वेन्द्रियाणां नयनं प्रधानं
सर्वेषु गात्रेषु शिरः प्रधानम्।।४।।

सभी औषधियों में गिलोय प्रमुख है, सभी सुखों में भोजन, सभी इन्द्रियों में नेत्र और सभी अंगों में सिर।

Of all the herbs it is the Cocculus Cordifolius that is the best, of all the forms of happiness it is eating that is so, of all the sense organs it is eye that steals the palm, of all the limbs it is the head that stands out.

दूतो न सञ्चरति खे न चलेच्च वार्ता
पूर्वं न जल्पितमिदं न च संगमोऽस्ति।
व्योम्नि स्थितं रविशशिग्रहणं प्रशस्तं
जानाति यो द्विजवरः स कथं न विद्वान्।।५।।

आकाश में कोई दूत तो विचरण कर नहीं रहा, कोई बातचीत भी नहीं चल रही, पहले यह कहा नहीं गया (=इसकी चर्चा पहले की नहीं गई), न किसी से मेल हुआ। आकाश में होने वाले प्रशस्त सूर्य और चंद्रग्रहण को जो श्रेष्ठ ब्राह्मण जानता है वह विद्वान् कैसे नहीं है?

There is no emissary in the sky, neither is there any talk going on, nor was it spoken about earlier, nor was there any contact. The great Brahmin who knows the eclipse of the sun and the moon taking place in the sky, how come he cannot be a scholar?

विद्यार्थी सेवकः पान्थः क्षुधार्तो भयकातरः।
भण्डारी च प्रतीहारी सप्त सुप्तान् प्रबोधयेत्।।६।।

विद्यार्थी, सेवक, पथिक, भूख से पीड़ित, भय विह्वल, भण्डारी और द्वारपाल—यदि ये सात सो रहे हों तो इन्हें जगा दें।

If the [following] seven were to be asleep, one should awaken them : a student, a servant, a wayfarer, one tormented by hunger, one tremulous in fear, the store-keeper and a gate-keeper.

अहिं नृपं च शार्दूलं किटिं च बालकं तथा।
परश्वानं च मूर्खं च सप्त सुप्तान् न बोधयेत्।।७।।

[निम्ननिर्दिष्ट] सात को, यदि वे सो रहे हों तो न जगायें — सांप, राजा, बाघ, सूअर, बालक, दूसरे का कुत्ता और मूर्ख।

These seven, if asleep, one should not wake up : a snake, a king, a tiger, a boar, a child, some body else's dog, and a fool.

अर्थाधीताश्च यैर्वेदास्तथा शूद्रान्नभोजिनः।
ते द्विजाः किं करिष्यन्ति निर्विषा इव पन्नगाः।।८।।

धन के लिए (=पैसा कमाने के लिये) जिन्होंने वेद पढ़े तथा जो शूद्रों का अन्न खाते हैं वे ब्राह्मण विषहीन सांपों की तरह क्या कर पायेंगे?

Like snakes without poison what will such Brahmins do as have studied the Vedas for money and who help themselves with the food of the Śūdras?

यस्मिन् रुष्टे भयं नास्ति तुष्टे नैव धनागमः।
निग्रहोऽनुग्रहो नास्ति स रुष्टः किं करिष्यति।।६।।

जिसके नाराज़ होने पर डर नहीं लगता, प्रसन्न होने पर पैसा नहीं मिलता, दण्ड भी नहीं है, कृपा भी नहीं है, यदि वह नाराज़ भी हो जाय तो क्या कर लेगा?

If there is no fear if he is unhappy, nor gain of wealth if he is happy, neither is there punishment nor favour, what will he be able to do even when displeased?

निर्विषेणापि सर्पेण कर्तव्या महती फणा।
विषमस्तु न चाप्यस्तु फणाटोपो भयंकरः।।१०।।

सांप में विष यदि न भी हो तो भी उसे फण उठा के रखना चाहिये, विष हो या न हो, फण का उठाना भयंकर (=डरावना) होता है।

Even a snake with no poison should raise its hood. Be there poison or not, the raising of the hood instills fear.

प्रातर्द्यूतप्रसंगेन मध्याह्ने स्त्रीप्रसंगतः।
रात्रौ चौर्यप्रसंगेन कालो गच्छति धीमताम्।।११।।

प्रातःकाल जुआ खेलने से, मध्याह्न में स्त्री–संग से, रात्रि में चोरी करने से बुद्धिमानों का समय बीतता है।

[टिप्पणी–गूढाशय–प्रातः काल उस ग्रन्थ को बांचने से जिसमें जुए की चर्चा है, अर्थात् महाभारत, मध्याह्न में उस ग्रन्थ को बांचने से जिसमें स्त्री की कथा है, अर्थात् रामायण, रात्रि में उस ग्रन्थ

को बांचने से जिसमें चोरी (गोपियों के वस्त्रहरण आदि) का वर्णन है, अर्थात् श्रीमद्भागवत बुद्धिमान् अपना समय बिताते हैं].

Applying themselves to gambling in the morning, to women in noon and theft in the night the wise spend their time.

[There is metaphoric reference here to three texts. *Dyūtaprasaṅga* refers here to a text where there is reference to the game of dice, viz., the *Mahābhārata, strīprasaṅga* refers to a text which deals with the story of a woman [Sītā, cf. *Sītāyāś caritaṁ mahat*], viz., the *Rāmāyaṇa* and *cauryaprasaṅga* refers to a text *Śrīmadbhāgavata-purāṇa* that describes theft (of the clothes of the cowherd ladies, the Gopīs.) The purport of the verse is that the wise should divide their time in reading the three texts, in the morning they should read the *Mahābhārata*, in the noon the *Rāmāyaṇa* and in the night the *Śrīmadbhāgavata-purāṇa*].

स्वहस्तग्रथिता माला स्वहस्तघृष्टचन्दनम्।
स्वहस्तलिखितं स्तोत्रं शक्रस्यापि श्रियं हरेत्।।१२।।

अपने हाथ से गूंथी हुई माला, अपने हाथ से घिसा हुआ चन्दन, और अपने हाथ से लिखा हुआ स्तोत्र—ये इन्द्र की शोभा का भी हरण कर सकते हैं।

A garland strung by one's own hands, the sandalwood rubbed by one's own hands and a devotional hymn written in one's own hand can eclipse even the glory of Indra.

इक्षुदण्डास्तिलाः क्षुद्राः कान्ता हेम च मेदिनी।
चन्दनं दधि ताम्बूलं मर्दनं गुणवर्धनम्।।१३।।

गन्ना, तिल, गँवार, स्त्री, स्वर्ण, पृथ्वी, चन्दन, दही और पान इनका मसलना इनके गुण को बढ़ाता है।

The pressing of sugarcane, sesame seeds, uncouth person, damsel, gold, earth, sandalwood, curd and betal leaf adds to their qualities.

दरिद्रता धीरतया विराजते
कुवस्त्रता शुभ्रतया विराजते।
कदन्नता चोष्णतया विराजते
कुरूपता शीलतया विराजते।।१४।।

दरिद्रता के साथ धैर्य मेल खाता है, साधारण वस्त्र यदि साफ़ सुथरे हों तो चल जाते हैं, भोजन यदि अच्छा नहीं भी है पर है गरम तो ठीक लगता है, बदसूरती आचार अच्छा होने पर खटकती नहीं।

Poverty goes well with patience, ordinary clothes look good when cleansed, food not so good tastes well when heated, ugly figure appeals with good conduct.

दशमोऽध्यायः

Chapter – 10

धनहीनो न हीनश्च धनिकः स सुनिश्चयः।
विद्यारत्नेन यो हीनः स हीनः सर्ववस्तुषु।।१।।

धनहीन होने से कोई हीन (नीचा) नहीं हो जाता, जिसका संकल्प अच्छा है वह धनी ही है। विद्यारूपी रत्न जिसके पास नहीं है वह सभी पदार्थों से हीन (=खाली) है।

One is not lowly just because one has no money. If his resolve is good, he is rich. One who does not have jewel in the form of knowledge is deprived of all things.

दृष्टिपूतं न्यसेत्पादं वस्त्रपूतं पिबेज्जलम्।
शास्त्रपूतं वदेद् वाक्यं मनःपूतं समाचरेत्।।२।।

दृष्टि से छान कर पांव धरे, वस्त्र से छान कर जल पिये, शास्त्र से छान कर शब्द बोले, मन से छान कर आचरण करे।

One should set foot by straining [the place] with eyes, drink water by straining it with a piece of cloth, utter words by straining them through Śāstras (scriptures), [and] conduct oneself after straining [the conduct] through mind.

सुखार्थी चेत्त्यजेद्विद्यां विद्यार्थी चेत् त्यजेत् सुखम्।
सुखार्थिनः कुतो विद्या कुतो विद्यार्थिनः सुखम्।।३।।

यदि सुख चाहते हो तो विद्या छोड़ो, यदि विद्या चाहते हो तो सुख छोड़ो। सुख चाहने वाले को विद्या कहां, विद्या चाहने वाले को सुख कहां?

If you seek comfort, leave aside knowledge, if you seek knowledge, keep away from comfort. How can there be

knowledge for one who seeks comfort and comfort for one who seeks knowledge?

कवयः किं न पश्यन्ति किं न कुर्वन्ति योषितः।
मद्यपाः किं न जल्पन्ति किं न भक्षन्ति वायसाः।।४।।

कवि क्या नहीं देखते, स्त्रियां क्या नहीं करतीं, शराबी क्या नहीं बकते, कव्वे क्या नहीं खाते?

What is that which the poets do not see, women do not do, drunkards do not blurt out, crows do not eat?

रंकं करोति राजानं राजानं रंकमेव च।
धनिनं निर्धनं चैव निर्धनं धनिनं विधिः।।५।।

विधाता राजा को रंक और रंक को राजा, धनी को निर्धन और निर्धन को धनी बना देता है।

Destiny makes a pauper a king and a king a pauper as also a rich man poor and a poor man rich.

लुब्धानां याचकः शत्रुर्मूर्खाणां बोधको रिपुः।
जारस्त्रीणां पतिश्शत्रुश्चोराणां चन्द्रमा रिपुः।।६।।

लालची लोगों का याचक (मांगने वाला) शत्रु है, समझाने वाला (=सदुपदेश देने वाला) मूर्खों का शत्रु है, व्यभिचारिणी स्त्रियों का पति शत्रु है, चोरों का चन्द्रमा शत्रु है।

A beggar is the enemy of the greedy, an instructor that of the fools, the husband that of the unchaste women and the moon that of the thieves.

येषां न विद्या न तपो न दानं
न चापि शीलं न गुणो न धर्मः।

ते मर्त्यलोके भुवि भारभूता
मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति।।७।।

जिनमें न विद्या है, न तप, न दान, न शील (=सदाचार), न गुण, न धर्म, वे (इस) मनुष्य लोक में पृथ्वी पर भार बने हुए पशु हैं जो मनुष्य रूप में विचरण कर रहे हैं।

Those who are devoid of knowledge, austerity, charity, good conduct, quality [and] righteousness are the deer (=animals) in human form that strut the earth, the very burden on it.

अन्तःसारविहीनानामुपदेशो न जायते।
मलयाचलसंसर्गान्न वेणुश्चन्दनायते।।८।।

जिनके भीतर कोई तत्त्व नहीं है उनके लिये उपदेश नहीं होता (=उपदेश का कोई अर्थ नहीं है)। मलय पर्वत के सम्पर्क के कारण बांस चन्दन नहीं बन जाता।

To those who do not have anything solid in them instruction is not imparted (=instruction has no meaning). With its contact with the Malaya mountain [since it is on the Malaya mountain] bamboo does not turn into sandalwood.

यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा शास्त्रं तस्य करोति किम्?
लोचनाभ्यां विहीनस्य दर्पणः किं करिष्यति?।।६।।

जिसकी अपनी बुद्धि नहीं है शास्त्र उसका क्या करेगा? जिसकी आंखें नहीं, दर्पण (शीशा) उसका क्या करेगा?

What (good) will the Śāstra do to him who is not blessed with intellect? What will the looking glass do to him who is not blessed with eyes?

दुर्जनं सज्जनं कर्तुमुपायो नहि भूतले।
अपानं शतशो धौतं न श्रेष्ठमिन्द्रियं भवेत्।।१०।।

दुर्जन को सज्जन बनाने का उपाय इस भूलोक में नहीं है। गुदा सौ बार धोने पर भी श्रेष्ठ इन्द्रिय नहीं बन जाती।

There is no method on the earth to turn a bad man into a good one. The anus, even if washed a hundred times, does not turn into a superior/better organ.

आत्मद्वेषाद् भवेन्मृत्युः परद्वेषाद् धनक्षयः।
राजद्वेषाद् भवेन्नाशो ब्रह्मद्वेषात् कुलक्षयः।।११।।

अपने आप से द्वेष करने से मृत्यु होती हैं, दूसरे से द्वेष करने से धन का नाश होता है, राजा से द्वेष करने से (अपना) नाश होता है, ब्राह्मण से द्वेष करने से कुल का नाश होता है।

Hatred to oneself leads to death, to another person to loss of wealth, to the king to destruction and to a Brahmin to the destruction of the family.

वरं वनं व्याघ्रगजेन्द्रसेविते
द्रुमालये पत्रफलाम्बुभोजनम्।
तृणेषु शय्या शतजीर्णवल्कलं
न बन्धुमध्ये धनहीनजीवनम्।।१२।।

बाघ और बड़े–बड़े हाथियों वाले जंगल में, वृक्ष ही जहां घर है पत्तों, फलों और जल का सेवन, घास पर सोना, सौ जगह फटी वृक्षों की छाल [को पहनना], भला, पर बन्धुओं के बीच निर्धन होकर जीना नहीं।

It is better to subsist on leaves, fruits and water in a tree-home in a forest infested by tigers, and lordly elephants, sleep on grass and put on tree-bark torn at hundreds of places than to live among kinsmen in poverty.

विप्रो वृक्षस्तस्य मूलं च सन्ध्या
वेदाः शाखा धर्मकर्माणि पत्रम्।
तस्मान्मूलं यत्नतो रक्षणीयं
छिन्ने मूले नैव शाखा न पत्रम्।।१३।।

ब्राह्मण वृक्ष है, उसकी जड़ सन्ध्या है, वेद शाखाएँ हैं, धार्मिक कृत्य पत्ते हैं। इसलिये जड़ की यत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिये। जड़ कट जाने पर न होगी शाखा, न होगा पत्ता।

The Brahmin is the tree, its root is the morning, noon and evening prayer, the Vedas are the branches, the spiritual activities are the leaves. Hence it is the root that needs to be protected with care. With the root gone, there will be neither the branch nor the leaf.

माता च कमलादेवी पिता देवो जनार्दनः।
बान्धवा विष्णुभक्ताश्च स्वदेशो भुवनत्रयम्।।१४।।

लक्ष्मी जिसकी माता है, पिता विष्णु और बन्धु–बान्धव विष्णु भक्त, उसके लिये तीन लोक स्वदेश ही हैं।

Who has his mother in Lakṣmī, father in Viṣṇu and the relatives in His devotees, for him all the three worlds are his own country.

एकवृक्षसमारूढा नानावर्णा विहंगमाः।
प्रभाते दिक्षु दशसु का तत्र परिदेवना।।१५।।

एक वृक्ष पर बैठे हुए रंग बिरंगे पक्षी प्रातः होने पर दस (=अलग–अलग) दिशाओं में (उड़ जाते हैं)। वहां रोना क्या?

Birds of different hues perching on the same tree [fly off to] ten [different] directions at day-break. What is there to feel sorry about?

बुद्धिर्यस्य बलं तस्य निर्बुद्धेस्तु कुतो बलम्।
वने सिंहो मदोन्मत्तः शशकेन निपातितः।।१६।।

जिसके पास बुद्धि है शक्ति भी उसी के पास है, बुद्धिहीन के पास बल कहां! जंगल में मदमस्त सिंह को खरगोश ने गिरा दिया (=मार दिया)।

One who has wisdom has strength. What strength could there be with one who is devoid of it? In the forest a lion intoxicated with pride was felled by an hare.

का चिन्ता मम जीवने यदि हरिर्विश्वम्भरो गीयते
नो चेदर्भकजीवनाय जननीस्तन्यं कथं निःसरेत्।
इत्यालोच्य मुहुर्महुर्यदुपते लक्ष्मीपते केवलं
त्वत्पादाम्बुजसेवनेन सततं कालो मया नीयते।।१७।।

यदि जगत् के पालक हरि का गान हो रहा हो तो मुझे जीवन में चिन्ता किस बात की? नहीं तो शिशु को जीवित रखने के लिये माता का स्तन्य (दूध) कैसे निकलता? यह सोच हे यदुपति, लक्ष्मीपति, केवल तुम्हारे चरण–कमलों की निरन्तर आराधना में मैं समय बिता रहा हूँ।

When the praise of Hari, the sustainer of the universe, is sung, what worry can there be in my life? Were it not so, how would milk come out of the mother to sustain the life of an infant? Considering this, O the lord of Yadus and Lakṣmī, I spend my time in constant worship of your lotus-like feet.

गीर्वाणवाणीषु विशिष्टबुद्धि–
स्तथाऽपि भाषान्तरलोलुपोऽहम्।
यथा सुराणाममृते स्थितेऽपि
स्वर्गाङ्गनानामधरासवे रुचिः।।१८।।

यद्यपि संस्कृत भाषा के प्रति मेरा विशेष लगाव है तो भी अन्य भाषाओं का भी मैं लोभी हूं। यह वह स्थिति है कि देवताओं के पास अमृत होने पर भी अप्सराओं के अधर–रस का पान करने की उनकी इच्छा रहती है।

Even though I have special attachment for the Sanskrit language, I have a liking for other languages as well. The situation is similar to that of gods who, though they have nectar with them, are keen to drink the nectar (by kissing) of the lower lips of the nymphs.

अन्नाद् दशगुणं पिष्टं पिष्टाद् दशगुणं पयः।
पयसोऽष्टगुणं मांसं मांसाद् दशगुणं घृतम्।।१६।।

चावल से दस गुना अधिक शक्ति आटे में है, आटे से दस गुना अधिक शक्ति दूध में है, दूध से आठ गुना अधिक शक्ति मांस में है और मांस से दस गुना अधिक शक्ति घी में है।

Flour has ten times more of potency in it than rice, milk has ten times more of it than flour, meat has eight times more of it than milk and ghee has ten times more of it than meat.

शाकेन रोगा वर्धन्ते पयसा वर्धते तनुः।
घृतेन वर्धते वीर्यं मांसान्मांसं प्रवर्धते।।२०।।

सब्जियों से रोग बढ़ते हैं, दूध से शरीर बढ़ता है (=हृष्ट पुष्ट होता है), घी से वीर्य बढ़ता है, मांस से मांस बढ़ता है।

Diseases catch up with vegetables, body gains in strength with milk, semen increases with ghee, flesh gains from flesh.

एकादशोऽध्यायः

Chapter - 11

दातृत्वं प्रियवक्तृत्वं धीरत्वमुचितज्ञता।
अभ्यासेन न लभ्यन्ते चत्वारः सहजा गुणाः।।१।।

दानशीलता, मीठे बोल, धीरता, उचित का ज्ञान, ये चार गुण अभ्यास से हासिल नहीं होते, वे तो सहज (=स्वाभाविक) होते हैं।

Philanthropy, sweet speech, fortitude, knowledge of propriety—these four qualities are not acquired through practice; they are inborn.

आत्मवर्गं परित्यज्य परवर्गं समाश्रयेत्।
स्वयमेव लयं याति यथा राज्यमधर्मतः।।२।।

अपने समुदाय को छोड़ दूसरे समुदाय में जो जा मिलता है वह स्वयमेव नष्ट हो जाता है जैसे अधर्म से राज्य।

One who deserts his community and joins that of another one, comes to naught of himself just as a kingdom through unrighteousness.

हस्ती स्थूलतनुः स चांकुशवशः किं हस्तिमात्रोऽङ्कुशो
दीपे प्रज्वलिते प्रणश्यति तमः कि दीपमात्रं तमः।
वज्रेणापि हताः पतन्ति गिरयः किं वज्रमात्रो गिरिः
तेजो यस्य विराजते स बलवान् स्थूलेषु कः प्रत्ययः।।३।।

हाथी का शरीर कितना लम्बा चौड़ा है पर वह भी अंकुश से बस में आ जाता है, क्या अंकुश हाथी के आकार का है? दीया जलने पर अन्धकार दूर हो जाता है, क्या अन्धकार दीये के आकार भर का है? गाज जब उन पर गिरती है तो पहाड़ ढ़ह जाते हैं,

क्या पहाड़ गाज भर के आकार के हैं? जिसमें तेज है वही बलवान् है। आकार–प्रकार बड़े होने का क्या विश्वास।

An elephant has a big body, even that is controlled by goad. Is the goad of the size of an elephant? With the light of the lamp disappears darkness. Is darkness of the size of lamp? When thunderbolt strikes, fall flat the mountains. Is thunderbolt of the size of mountain? One who has strength is mighty. What faith can one place in those who are massive?

कलौ दशसहस्रेषु हरिस्त्यजति मेदिनीम्।
तदर्धं जाह्नवीतोयं तदर्धं ग्रामदेवता।।४।।

कलियुग में दस हज़ार वर्ष बीत जाने पर हरि पृथिवी से विदा लेते हैं अर्थात् वहां रहते नहीं। उससे आधे [वर्षों] में गंगा जल और उससे भी आधे वर्षों में ग्राम देवता पृथिवी को छोड़ देते हैं।

Hari leaves the earth with the [passage of] ten thousand years in kali yuga, in the half of that period does the Gaṅgā water and in the half of that the village deity.

गृहासक्तस्य नो विद्या
न दया मांसभोजिनः।
द्रव्यलुब्धस्य नो सत्यं
न स्त्रैणस्य पवित्रता।।५।।

जिसका घर से लगाव है वह विद्या नहीं प्राप्त कर सकता, मांस खाने वाला दयालु नहीं होता, धन का लालची सच नहीं बोलता, भोग–विलासी मनुष्य में पवित्रता नहीं हो सकती।

One who is [too much] attached to home cannot acquire knowledge. A meat-eater has no mercy. One greedy of wealth does not speak truth, one given to sensuous pleasures cannot be pure.

न दुर्जनः साधुदशामुपैति
बहुप्रकारैरपि शिक्ष्यमाणः।
आमूलसिक्तः पयसा घृतेन
न निम्बवृक्षो मधुरत्वमेति।।६।।

तरह–तरह से सीख दिये जाने पर भी दुष्ट व्यक्ति सुधरता नहीं। दूध और घी से जड़ तक सींचा जाने पर भी नीम का पेड़ मीठा नहीं बनता।

A wicked man does not turn good even when instructed in different ways. The margo tree even when besprinkled with milk and ghee up to the very roots does not turn sweet.

अन्तर्गतमलो दुष्टस्तीर्थस्नानशतैरपि।
न शुध्यति यथा भाण्डं सुराया दाहितं च सत्।।७।।

दुष्ट जो भीतर से कलुषित है सैकड़ों बार तीर्थों में स्नान करने पर भी शुद्ध नहीं होता जैसे सुरा का पात्र तपाए जाने पर भी।

A wicked person with his interior defiled does not get purified even by having bath in sacred places hundreds of times like liquor vessel even when intensely heated.

न वेत्ति यो यस्य गुणप्रकर्षं
स तं सदा निन्दति नात्र चित्रम्।
यथा किराती करिकुम्भजाता
मुक्ताः परित्यज्य बिभर्ति गुञ्जाः।।८।।

जो जिसके गुणों की श्रेष्ठता को नहीं जानता, वह सदा उसकी निन्दा करता है। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं। यह तो वही बात हुई कि भीलनी हाथियों के गण्डस्थलों से निकले मोतियों को छोड़ रत्तियों को धारण करे।

One who does not reckon the qualities of others would always speak ill of them. There is nothing surprising about it. It is like a Bhil woman wearing Guñjās, berries of a kind of shrub, instead of the pearls issued from the temples of elephants.

यस्तु संवत्सरं पूर्णं नित्यं मौनेन भुञ्जति।
युगकोटिसहस्रं तु स्वर्गलोके महीयते।।६।।

जो पूरा का पूरा वर्ष नियम से चुप रह कर भोजन करता है, वह एक हज़ार करोड़ युगों तक स्वर्गलोक में आदर पाता है।

One who has meals for a full year in silence gets respect in heaven for a thousand crore Yugas (4302000 years).

कामं क्रोधं तथा लोभं स्वादं शृङ्गारकौतुके।
अतिनिद्रातिसेवे च विद्यार्थी ह्यष्ट वर्जयेत्।।१०।।

विद्यार्थी को ये आठ चीज़ें छोड़नी चाहियें — काम, क्रोध, लोभ, स्वाद, शृङ्गार (फ़ैशन परस्ती), खेल–तमाशे, बहुत अधिक सोना और बहुत अधिक सेवा करना (=चापलूसी करना)।

A student should shun the following eight: passion, anger, greed, relish, make-up, song and drama shows, too much sleep and service (= flattery).

अकृष्टफलमूलेन वनवासरतः सदा।
कुरुतेऽहरहः श्राद्धमृषिर्विप्रः स उच्यते।।११।।

सदा जंगल में रहने को पसन्द करने वाला जो ब्राह्मण, बिना जुती हुई (भूमि से पैदा हुए) फल और कन्द से प्रतिदिन श्राद्ध करता है वह ऋषि कहलाता है।

A Brahmin who living life in a forest all times performs Śrāddha with fruits and roots growing in untilled land (obsequial oblations) every day is called Ṛṣi.

एकाहारेण सन्तुष्टः षट्कर्मनिरतः सदा।
ऋतुकालाभिगामी च स विप्रो द्विज उच्यते।।१२।।

जो एक समय के भोजन से सन्तुष्ट हो जाता है, सदा छः कर्मों [अध्यापन, अध्ययन, यजन (यज्ञ करना), याजन (यज्ञ कराना), दान और प्रतिग्रह (दान लेना)] में लगा रहता है और ऋतुकाल में स्त्रीगमन करता है उस ब्राह्मण को द्विज कहा जाता है।

A Brahmin who is satisfied with only one meal and keeps himself engaged continuously in six activities (teaching, studying, performing sacrifice, helping others perform the same, giving and receiving charity) and has coition with his wife in the period favourable for conception is called Dvija.

लौकिके कर्मणि रतः पशूनां परिपालकः।
वाणिज्यकृषिकर्ता यः स विप्रो वैश्य उच्यते।।१३।।

जो लौकिक कामों में लगा रहता है, पशु–पालन करता है, वाणिज्य और कृषि जिसके व्यवसाय हैं उस ब्राह्मण को वैश्य कहा जाता है।

A Brahmin who keeps himself busy in worldly affairs, looks after animals and engages himself in trade and agriculture is called Vaiśya.

लाक्षादितैलनीलानां कुसुम्भमधुसर्पिषाम्।
विक्रेता मद्यमांसानां स विप्रः शूद्र उच्यते।।१४।।

जो ब्राह्मण लाख आदि, तेल, नील, केसर, शहद, घी, मदिरा और मांस को बेचता है उसे शूद्र कहा जाता है।

A Brahmin who sells lac and the like, oil, indigo, saffron, honey, ghee, liquor and meat is called Śūdra.

परकार्यविहन्ता च दाम्भिकः स्वार्थसाधकः।
छली द्वेषी मृदुः क्रूरो विप्रो मार्जार उच्यते।।१५।।

जो ब्राह्मण दूसरे के काम को बिगाड़ता है, पाखण्डी है, (केवल) स्वार्थ की पूर्ति करता है, छली, द्वेषी, कोमल और क्रूर है उसे मार्जार (बिलाव) कहा जाता है।

A Brahmin who puts spokes in the work of others, is hypocritical, selfish, deceitful, envious, gentle and cruel is said to be Mārjāra, a he cat.

वापीकूपतडागानामारामसुरवेश्मनाम्।
उच्छेदने निराशंकः स विप्रो म्लेच्छ उच्यते।।१६।।

जिस ब्राह्मण को बावड़ी, कुआं, तालाब, बाग, देवालय (मन्दिर) को ध्वस्त करने में भय नहीं लगता उसे म्लेच्छ कहा जाता है।

A Brahmin who has no compunction in destroying an oblong reservoir of water, well and tank, garden [and] temple is called Mleccha.

देवद्रव्यं गुरुद्रव्यं परदाराभिमर्षणम्।
निर्वाहः सर्वभूतेषु विप्रश्चाण्डाल उच्यते।।१७।।

जो ब्राह्मण देवताओं के द्रव्य [मन्दिर में देवताओं को चढ़ाये हुए रुपये–पैसों को] और गुरु के धन को चुराता है एवञ्च दूसरे

की स्त्री के साथ बलात्कार करता है और हर तरह के प्राणियों के साथ जो निभा लेता है उसे चाण्डाल कहा जाता है।

A Brahmin who [steals] the money given as an offering to gods as also to teachers, outrages the modesty of the wives of others, and can get along with all kinds of people is called Cāṇḍāla.

देयं भोज्यधनं सदा सुकृतिभिर्नो सञ्चितव्यं सदा।
श्रीकर्णस्य बलेश्च विक्रमपतेरद्यापि कीर्तिः स्थिता।
अस्माकं मधु दानभोगरहितं नष्टं चिरात् सञ्चितं
निर्वाणादिति पाणिपादयुगले घर्षन्त्यहो मक्षिकाः।।१८।।

पुण्यात्माओं को चाहिये कि खाने–पीने का सामान तथा धन हमेशा (सुपात्र को) देते रहें, इन्हें हमेशा इकट्ठा ही न करते रहें। श्रीकर्ण, बलि और विक्रमादित्य की कीर्ति [इसी कारण] आज भी विद्यमान है। दान और उपभोग से रहित बहुत समय से इकट्ठा किया हुआ हमारा मधु (=शहद) नष्ट हो गया इस खेद के कारण ओह, मधुमक्खियां अपने दोनों हाथों और पावों को घिसती हैं (मलती हैं)।

The pious people should always give food and money in charity, never should they accumulate them. The glory of the illustrious Karṇa, Bali and Vikramāditya persists unabated even now. Look, the honey bees rub their hands and feet because of the despondency of losing honey that they had gathered for long.

द्वादशोऽध्यायः

Chapter - 12

सानन्दं सदनं सुताश्च सुधियः कान्ता प्रियालापिनी
इच्छापूर्ति धनं स्वयोषिति रतिः स्वाज्ञापराः सेवकाः।
आतिथ्यं शिवपूजनं प्रतिदिनं मिष्टान्नपानं गृहे
साधोः संगमुपासते च सततं धन्यो गृहस्थाश्रमः।।१।।

आनन्दपूर्ण घर, बुद्धिमान् पुत्र, मधुरभाषिणी पत्नी, इतना धन जिस से इच्छाएं पूर्ण हो जायें, अपनी स्त्री (पत्नी) में आसक्ति, अपनी आज्ञा को मानने वाले नौकर–चाकर, अतिथि–सेवा, प्रतिदिन शिव पूजा, घर में मिष्टान्न और मधुर पेय का सेवन और निरन्तर सन्त समागम–धन्य है गृहस्थाश्रम।

A happy home, intelligent sons, wife of sweet speech, as much money as would fulfil desires, attachment to one's own wife, obedient servants, welcome to guests, worship of Śiva every day, tasty food and drink in the house and association with the good people—blessed is the life of a house-holder.

आर्तेषु विप्रेषु दयान्वितश्च
यत् श्रद्धया स्वल्पमुपैति दानम्।
अनन्तपारं समुपैति राजन्!
यद् दीयते तन्न लभेद् द्विजेभ्यः।।२।।

जो दयालु व्यक्ति पीड़ित ब्राह्मणों को श्रद्धापूर्वक थोड़ा सा भी दान देता है, हे राजन्, वह अनन्त बन कर (वापिस) आ जाता है। जितना भर ब्राह्मणों को वह देता है उतना भर ही उसे नहीं मिलता (बल्कि कई गुना अधिक)।

Whatever small amount a kind person gives in charity in all respect to Brahmins in trouble, O king, does not get back

in the same amount as is given to Brahmins (but countless times more.)

दाक्षिण्यं स्वजने दया परजने शाठ्यं सदा दुर्जने
प्रीतिः साधुजने स्मयः खलजने विद्वज्जने चार्जवम्।
शौर्यं शत्रुजने क्षमा गुरुजने नारीजने धृष्टता
इत्थं ये पुरुषाः कलासु कुशलास्तेष्वेव लोकस्थितिः।।३।।

बन्धुजनों के प्रति शालीनता, अन्य लोगों के प्रति दया, दुर्जनों के प्रति सदा शठता (=दुष्टता), सज्जनों से प्रेम, दुष्टों के सामने अकड़ना, विद्वानों के साथ सरलता, शत्रुओं के प्रति शूरवीरता, बड़ों के प्रति सहनशीलता, स्त्रियों के प्रति ढ़िठाई– इस प्रकार जो मनुष्य (इन) कलाओं में कुशल हैं, यह संसार उन्हीं पर टिका है।

Civility towards kith and kin, compassion towards others, wickedness towards the wicked all times, love for the good, arrogance towards the half-wicked, straightforwardness towards the learned, bravery against the enemies, forgiveness towards the elders, boldness towards women—in this way the men who are adept in (these) arts, the world rests on them.

हस्ती दानविवर्जितः श्रुतिपुटौ सारस्वतद्रोहिणौ
नेत्रे साधुविलोकनेन रहिते पादौ न तीर्थं गतौ।
अन्यायार्जितवित्तपूर्णमुदरं गर्वेण तुंगं शिरो
रे रे जम्बुक! मुञ्च मुञ्च सहसा नीचं सुनिन्द्यं वपुः।।४।।

मदजल रहित हाथी, वेद–शास्त्रों से द्रोह करने वाले कान, सज्जनों को न देखने वाले नेत्र, पांव जो तीर्थों में गये नहीं, अन्याय से कमाये हुए धन से भरा पेट, अहंकार से ऊँचा सिर, अरे गीदड़! अपने अति निन्दनीय शरीर को तुरन्त छोड़ दे, छोड़ दे।

An elephant with no ichor, ears inimical to Vedas and Śāstras, eyes with no sight of the good people, the feet that did

not get set on holy places, the belly filled with wealth earned through unrighteous means, head raised in conceit, O ye jackal, thou give up, O ye jackal, give up at once [your] despicable body.

येषां यशोदासुतपदकमले नास्ति भक्तिर्नराणां
येषामाभीरकन्याप्रियगुणकथने नानुरक्ता रसज्ञा।
येषां श्रीकृष्णलीलाललितरसकथासादरौ नैव कर्णौ
धिक् तान् धिक् तान् धिगेतान् कथयति सततं
कीर्तनस्थो मृदंगः।।५।।

जिन मनुष्यों की यशोदा–पुत्र (श्रीकृष्ण) के चरणकमल के प्रति भक्ति नहीं है, जिनकी जिह्वा गोपियों के प्रिय गुणों का वर्णन करने में रुचि नहीं रखती, जिनके कान श्रीकृष्ण की लीलाओं की रुचिकर रसभरी कथाओं को सुनना नहीं चाहते उन्हीं को लक्ष्य कर कीर्तन के समय मृदंग अनवरत यही कहता जा रहा है– उन्हें धिक्कार है, उन्हें धिक्कार है, उन्हें धिक्कार है।

The men who are not devoted to the lotus feet of the son of Yaśodā (Kṛṣṇa), whose tongue finds no delight in speaking about the lovely qualities of the cowherd damsels (Gopīs), whose ears are not attuned to [listening to] the lovely juicy stories of the playful activities of Śrī Kṛṣṇa, it is to them the Mṛdaṅga, the tabor, goes on repeating the words in the course of the congregational prayers 'fie upon them, fie upon them, fie upon them'.

पत्रं नैव यदा करीरविटपे दोषो वसन्तस्य किं
नोलूकोऽप्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणम्।

वर्षा नैव पतन्ति चातकमुखे मेघस्य किं दूषणं
यत्पूर्वं विधिना ललाटलिखितं तन्मार्जितुं कः क्षमः।।६।।

यदि करीर की टहनी पर एक पत्ता तक भी नहीं उगता तो इसमें वसन्त का अपराध है क्या, यदि उल्लू दिन में नहीं देखता तो इसमें सूर्य का दोष है क्या, यदि चातक के मुख में वर्षा की बूंदे नहीं पड़तीं तो इसमें बादल का दोष है क्या? जो विधाता ने पहले माथे पर लिख दिया उसे कौन मिटा सकता है।

If even a leaf [does not grow] on the branch of the Karīra tree, does it mean that it is the fault of the spring? If an owl does not see during the day-time, does it mean that it is the fault of the sun? If the rain drops do not enter into the mouth of a Cātaka (a bird of that name), does it mean that it is the fault of the cloud? Who is there who can wipe off whatever Destiny has written on the forehead?

सत्सङ्गाद् भवति हि साधुता खलानां
साधूनां न हि खलसंगमात्खलत्वम्।
आमोदं कुसुमभवं मृदेव धत्ते
मृद्गन्धं नहि कुसुमानि धारयन्ति।।७।।

सज्जनों के साथ रहने से दुष्ट सज्जन हो जाते हैं, दुष्टों के साथ रहने से सज्जन दुष्ट नहीं। फूलों की महक को मिट्टी तो धारण करती है (उनकी महक मिट्टी में तो आ जाती है), मिट्टी की गन्ध को फूल नहीं।

It is with association with the good that the wicked turn good. The good do not turn into wicked with association with them. It is the earth only that carries the smell of the flowers, it is not the flowers that carry the smell of the earth.

साधूनां दर्शनं पुण्यं तीर्थभूता हि साधवः।
कालेन फलते तीर्थं सद्यः साधुसमागमः।।८।।

सज्जनों का दर्शन पुण्यकारक है, सज्जन तीर्थ रूप होते हैं। तीर्थ समय पर फल देता है, सज्जनों का संगम तत्काल।

The sight of the good people is the source of merit. They are the holy places incarnate. The holy places yield fruit (good result) in due time, the association with the good does so immediately.

विप्रास्मिन्नगरे महान् कथय कस्तालद्रुमाणां गणः
को दाता रजको ददाति वसनं प्रातर्गृहीत्वा निशि।
को दक्षः परदारवित्तहरणे सर्वोऽपि दक्षो जनः
कस्माज्जीवसि हे सखे! विषकृमिन्यायेन जीवाम्यहम्।।६।।

[प्रश्न] ब्राह्मण, बता इस नगर में बड़ा क्या है, [उत्तर] ताल वृक्षों का झुरमुट। [प्रश्न] देने वाला कौन है? [उत्तर] धोबी, जो सुबह कपड़े ले जाकर रात को लौटा देता है। [प्रश्न] दूसरों की स्त्री और दूसरे के धन का हरण करने में कौन निपुण है? [उत्तर] सभी। [प्रश्न] हे मित्र, किस तरह जी रहे हो? [उत्तर] ज़हर में रहने वाले कीड़े की तरह।

[Question] O Brahmin, tell me what is big in this city. [Answer] the grove of palmyra trees. [Question] Who gives? [Answer] the washer-man who takes the clothes in the morning and gives [back] in the night. [Question] Who is expert in abducting the wife and stealing the wealth of others? [Answer] All are so. [Question] O friend, how are you passing your life? [Answer] like an insect in poison.

न विप्रपादोदककर्दमानि
न वेदशास्त्रध्वनिगर्जितानि।

स्वाहास्वधाकारविवर्जितानि
श्मशानतुल्यानि गृहाणि तानि।।१०।।

जहां ब्राह्मणों के पांव धोने से कीचड़ नहीं है, वेद–शास्त्रों की ध्वनि की गूंज नहीं है, जहां स्वाहा और स्वधा का उच्चारण नहीं है, वे घर श्मशान तुल्य होते हैं।

The homes that do not have the mud caused by the washing of the feet of Brahmins, where there is no roaring sound of (reciting) the Vedas and Śāstras, nor are the sounds of Svāhā and Svadhā, are like cremation grounds.

सत्यं माता पिता ज्ञानं धर्मो भ्राता दया स्वसा।
शान्तिः पत्नी क्षमा पुत्रः षडेते मम बान्धवाः।।११।।

सत्य माता है, ज्ञान पिता है, धर्म भाई है, दया बहिन है, शान्ति पत्नी है, क्षमा पुत्र है– ये छः मेरे बन्धु हैं।

Truth is mother, knowledge is father, Dharma is brother, compassion is sister, peace is wife, forgiveness is son— these six are my relatives.

अनित्यानि शरीराणि विभवो नैव शाश्वतः।
नित्यं संनिहितो मृत्युः कर्तव्यो धर्मसञ्चयः।।१२।।

शरीर अनित्य (नश्वर) है, सम्पत्ति सदा रहने वाली नहीं, मृत्यु हमेशा पास खड़ी है। {इसलिये} धर्म–सञ्चय (धर्मोपार्जन) करना चाहिये।

Bodies are impermanent, riches are not eternal, death is always close at hand. One should [therefore] go on doing righteous deeds.

आमन्त्रणोत्सवा विप्रा गावो नवतृणोत्सवाः।
पत्युत्साहयुता भार्या अहं कृष्णरणोत्सवः।।१३।।

ब्राह्मणों का उत्सव उन्हें कहीं से न्यौता आना है, गायों का उत्सव नई घास (=दूब) है, पत्नी (का उत्सव) पति का उत्साही होना है, मेरा उत्सव भयंकर मार–काट वाला युद्ध है।

The festivity for Brahmins is an invitation (for meals), that for cows is fresh grass, that for wife is energetic husband and that for me is battle with terrible fight.

मातृवत् परदारांश्च परद्रव्याणि लोष्टवत्।
आत्मवत् सर्वभूतानि यः पश्यति स पश्यति।।१४।।

दूसरों की स्त्री को माता के समान, दूसरे के धन को मिट्टी के ढेले के समान, सब प्राणियों को अपने समान जो देखता है– वही (ठीक से) देखता है।

One who looks upon another's wife as mother, the wealth of others as a clod of earth, all beings as his own self has [the right] vision (has the correct approach).

धर्मे तत्परता मुखे मधुरता दाने समुत्साहता
मित्रेऽवञ्चकता गुरौ विनयता चित्तेऽतिगम्भीरता।
आचारे शुचिता गुणे रसिकता शास्त्रेषु विज्ञानता
रूपे सुन्दरता शिवे भजनता सत्स्वेव सन्दृश्यते।।१५।।

धर्म में तत्परता, मुख में (=वाणी में) माधुर्य, दान में उत्साह, मित्र को धोखा न देना, गुरु के प्रति विनयभाव, मन का अति गम्भीर होना, आचार में पवित्रता, गुण में रस लेना (=गुणग्राही होना), शास्त्रों का ज्ञान, रूप में सुन्दरता, शिव का भजन (ये) केवल सज्जनों में ही देखे जाते हैं।

Dedication to Dharma, sweetness in speech (lit. mouth), being energetic for charity, non-deceitfulness towards a friend, humility towards teacher, solid depth in the mind, purity in conduct, enjoying a quality, knowledge of Śāstras, beauty in figure, singing the praises of Śiva—are found only among the good.

काष्ठं कल्पतरुः सुमेरुरचलश्चिन्तामणिः प्रस्तरः
सूर्यस्तीव्रकरः शशी क्षयकरः क्षारो हि वारांनिधिः।
कामो नष्टतनुर्बलिर्दितिसुतो नित्यं पशुः कामगौ–
र्नैतांस्ते तुलयामि भो रघुपते! कस्योपमा दीयते।।१६।।

कल्पवृक्ष लकड़ी है, सुमेरु पर्वत है, चिन्तामणि पत्थर है, सूर्य की किरणें प्रचण्ड हैं, चन्द्रमा तपेदिक पैदा करता है, समुद्र खारा है, काम का शरीर नहीं, बलि दैत्य है, कामधेनु पशु है– हे रघुपति! (श्रीराम!) मैं इनसे आपकी तुलना नहीं करता हूं, किससे आपकी तुलना की जाय?

The desire-yielding tree is just wood, Sumeru is mountain, the desire-yielding jewel is stone, the sun has hot rays, the moon causes consumption, the ocean is saline, Kāma has no body, Bali is demon—O Raghupati (Rāma), I would not compare you with these, with what should I then compare you?

विद्या मित्रं प्रवासेषु भार्या मित्रं गृहेषु च।
व्याधितस्यौषधं मित्रं धर्मो मित्रं मृतस्य च।।१७।।

विदेश–निवास में विद्या मित्र है, घर में पत्नी मित्र है, रोगी का औषध मित्र है, धर्म दिवंगत का मित्र है।

Knowledge is friend in foreign sojourns, wife is friend at home, medicine is friend of the diseased and Dharma is friend of the deceased.

विनयं राजपुत्रेभ्यः पण्डितेभ्यः सुभाषितम्।
अनृतं द्यूतकारेभ्यः स्त्रीभ्यः शिक्षेत कैतवम्।।१८।।

राजकुमारों से विनय [=नम्रता, शालीनता], पण्डितों से सूक्तियां, जुआरियों से झूठ बोलना और स्त्रियों से धूर्तता सीखे।

One should learn civility/etiquette from princes, wise sayings from the learned, falsehood from gamblers, trickery from women.

अनालोक्य व्ययं कर्त्ता ह्यनाथः कलहप्रियः।
आतुरः सर्वक्षेत्रेषु नरः शीघ्रं विनश्यति।।१६।।

जो मनुष्य बिना देखे (=बिना सोचे–समझे) खर्चा करता है, अनाथ है (=जिसे देखने भालने वाला कोई नहीं), झगड़ालू प्रवृत्ति का है, {और} हर प्रकार की स्त्री के साथ (शारीरिक सम्बन्ध बनाने) को अधीर रहता है, वह शीघ्र नष्ट हो जाता है।

A person who indulges in expenses without giving a thought, has nobody to look after him, is quarrelsome and is eager (to have sexual relation) with all kinds of women comes to naught in all quickness.

नाहारं चिन्तयेत् प्राज्ञो धर्ममेकं हि चिन्तयेत्।
आहारो हि मनुष्याणां जन्मना सह जायते।।२०।।

बुद्धिमान् को भोजन की चिन्ता नहीं करनी चाहिये, एकमात्र धर्म की चिन्ता करनी चाहिये। भोजन तो मनुष्यों के जन्म के साथ ही जन्म ले लेता है।

A wise man should not think of the food. What should he think of is Dharma. Food is born with the birth of men.

जलबिन्दुनिपातेन क्रमशः पूर्यते घटः।
स हेतुः सर्वविद्यानां धर्मस्य च धनस्य च।।२१।।

एक–एक बूंद करके क्रमशः घड़ा भरता है। समस्त विद्याओं, धर्म और धन (के अर्जन) का यही क्रम है।

A jar is filled gradually drop by drop. That is the secret of all lores, Dharma and riches.

वयसः परिणामेऽपि यः खलः खल एव सः।
सुपक्वमपि माधुर्यं नोपयातीन्द्रवारुणम्।।२२।।

उमर पक जाने पर (=बुढ़ापा आ जाने पर) भी जो दुष्ट है वह दुष्ट ही रहता है। अच्छी तरह पक जाने पर भी इन्द्रवारुण (मराठी– मोटी कवड़क) मीठी नहीं बनती।

Even with the advance of age a wicked man continues to be wicked. Even the well-ripened wild bitter gourd does not turn sweet.

त्रयोदशोऽध्यायः

Chapter - 13

मुहूर्तमपि जीवेद्वै नरः शुक्लेन कर्मणा।
न कल्पमपि कष्टेन लोकद्वयविरोधिना।।१।।

अपने निर्मल (स्वच्छ, जिनमें किसी प्रकार का कलंक न हो) कार्यों से मनुष्य का एक घड़ी भर भी जीना अच्छा, न कि दोनों लोकों (=इहलोक और परलोक) को हानि पहुँचाने वाले कलुषित (कार्यों से) एक युग तक (जीना)।

It is better that one were to live just a moment doing unblemished deeds rather than live for [the length of] Yuga doing terrible deeds coming in the way of both the worlds (=this world and the other).

गते शोको न कर्तव्यो भविष्यं नैव चिन्तयेत्।
वर्तमानेन कालेन प्रवर्तन्ते विचक्षणाः।।२।।

जो बीत गया उसका दुःख नहीं मनाना चाहिये, भविष्य के बारे में सोचे नहीं। बुद्धिमान् लोग वर्तमान काल के हिसाब से काम करते हैं।

One should not grieve over what is past, nor should one think of the future. The wise act as per the present time.

स्वभावेन हि तुष्यन्ति देवाः सत्पुरुषाः पिता।
ज्ञातयस्त्वन्नपानाभ्यां वाक्यदानेन पण्डिताः।।३।।

देवता, सज्जन, पिता [अच्छे] स्वभाव से ही सन्तुष्ट हो जाते हैं। बन्धु–बान्धव खाने–पीने से और विद्वान् मधुर भाषण से।

Deities, good people [and] father get pleased just with [good] nature, the kith and kin do so with food and drink [and] the wise with [sweet] speech.

अहो बत! विचित्राणि चरितानि महात्मनाम्।
लक्ष्मीं तृणाय मन्यन्ते तद्भारेण नमन्ति च।।४।।

अहा, महात्माओं के काम विचित्र होते हैं। वे लक्ष्मी को तुच्छ समझते हैं [पर जब वह आ जाती है] तो उसके बोझ से झुक जाते हैं।

What a wonder! Strange are the ways of the high-souled. They care not for wealth. [But when they come to have it] they bend with its weight.

यस्य स्नेहो भयं तस्य स्नेहो दुःखस्य भाजनम्।
स्नेहमूलानि दुःखानि तानि त्यक्त्वा वसेत्सुखम्।।५।।

जिसका [जिस किसी से] प्रेम होता है, उसी का डर भी उसे रहता है, स्नेह में दुःख है (अक्षरार्थ– स्नेह दुःख का पात्र है)। दुःखों की जड़ में स्नेह है। उन्हें छोड़ सुखपूर्वक रहना चाहिये।

Whomsoever one gives affection, one is apprehensive of him [lest any harm were to come to him]. Affection is the repository of affliction. Troubles are rooted in affection. One should avoid them and lead a happy life.

अनागतविधाता च प्रत्युत्पन्नमतिस्तथा।
द्वावेतौ सुखमेधेते यद्भविष्यो विनश्यति।।६।।

जो अभी होना है उसका जो पहले से उपाय कर लेता है [और] जो हो रहा है उसका उपाय जिसकी बुद्धि ढूंढ निकालती है–

ये दोनों सुखी रहते हैं। [जो यह मान कर चलता है] कि जो होगा देखा जायगा, वह नष्ट हो जाता है (=उसका कुछ नहीं बचता)।

One who provides for that which is yet to happen and one who applies one's mind to think of the way to get out of the emerging situation—both live on happily. One who is of the view that let things happen the way they do, comes to grief.

Or

He who is equipped to deal with what is to happen in future, and one who has a mind quick enough to counter an emergent situation—these two live on happily. One who leaves things to the future, cuts a sorry figure.[2]

राज्ञि धर्मिणि धर्मिष्ठाः पापे पापाः समे समाः।
राजानमनुवर्तन्ते यथा राजा तथा प्रजाः।।७।।

राजा यदि धर्मात्मा होगा तो प्रजा भी वैसी होगी, यदि वह पापी होगा तो वह भी पापी होगी, यदि बीच की वृत्ति का वह हुआ तो वह भी वैसी होगी। प्रजा राजा का अनुसरण करती है, जैसा राजा वैसी प्रजा।

If the king is righteous, so would be his subjects. If he is sinner, so would be they. If he follows the middle path, so would they do. The subjects follow the king. As is the king, so are the subjects.

जीवन्तं मृतवन्मन्ये देहिनं धर्मवर्जितम्।
मृतो धर्मेण संयुक्तो दीर्घजीवी न संशयः।।८।।

मेरा मानना है कि धर्मरहित प्राणी जीते हुए भी मरे हुए के समान है। धर्म से युक्त (=धार्मिक) व्यक्ति मरने पर भी दीर्घजीवी है। इसमें सन्देह नहीं।

Methinks a person who is shorn of Dharma is as good as dead. One who is united with righteousness (Dharma) has long life even though dead. There is no doubt about this.

धर्मार्थकाममोक्षाणां यस्यैकोऽपि न विद्यते।
अजागलस्तनस्येव तस्य जन्म निरर्थकम्।।९।।

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में से जिसके पास एक भी नहीं है, बकरी के गले के स्तन की तरह उसका जन्म निरर्थक है।

The birth of the one who does not have even one of the [four]: Dharma (righteousness), Artha (worldly prosperity), Kāma (desire for sensual enjoyments) and Mokṣa (salvation, emancipation)] is as inconsequential as the nipple hanging down from the neck of a goat.

दह्यमानाः सुतीक्ष्णेन नीचाः परयशोऽग्निना।
अशक्तास्तत्पदं गन्तुं ततो निन्दां प्रकुर्वते।।१०।।

दूसरों के यश की तेज़ आग से जलने वाले नीच उनके पद को प्राप्त करने में असमर्थ होते हैं, इसलिये [उनकी] निन्दा करने लगते हैं।

The mean fellows being burnt by the (=widespread) fire of the fame of others, unable to reach their position, begin speaking ill of them.

बन्धाय विषयासक्तं मुक्त्यै निर्विषयं मनः।
मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।।११।।

विषयों में लगा हुआ मन बन्धन का कारण होता है। यदि विषयों से वह परे होता है तो वही मुक्ति तक पहुंचा देता है। मन ही मनुष्यों के बन्धन और मुक्ति का कारण है।

Engaged in sensuous objects mind is the cause of bondage while the same away from them is that of emancipation. It is the mind which is the cause of the bondage and release (emancipation).

देहाभिमाने गलिते विज्ञाते परमात्मनि।
यत्र यत्र मनो याति तत्र तत्र समाधयः।।१२।।

देह की भावना जब समाप्त हो जाती है और परमात्मज्ञान हो जाता है, [तब] जहां जहां मन जाता है वहीं वहीं समाधियां भी।

When the feeling of body wears off and the knowledge of the Supreme dawns, whichever the way the mind moves, move the meditations.

ईप्सितं मनसः सर्वं कस्य सम्पद्यते सुखम्।
दैवायत्तं यतः सर्वं तस्मात् सतोषमाश्रयेत्।।१३।।

मनचाहा हर प्रकार का सुख किसे मिलता है। क्योंकि सब कुछ भाग्य के अधीन है इसलिये सन्तोष का [ही] सहारा लो।

Who gets all kinds of happiness that mind aspires? Since everything is under the control of fate, one should take recourse to contentment.

यथा धेनुसहस्रेषु वत्सो गच्छति मातरम्।
तथा यच्च कृतं कर्म कर्तारमनुगच्छति।।१४।।

जैसे हज़ारों गायों में बछड़ा मां के पास चला जाता है वैसे ही किया हुआ कर्म करने वाले का पीछा करता है।

Just as a calf goes to its mother [even in the midst of] thousands of cows, in the same way the action done follows the doer.

अनवस्थितकार्यस्य न जने न वने सुखम्।
जने दहति संसर्गो वने संगविवर्जनम्।।१५।।

जिसके कामों में कोई व्यवस्था (क्रम, पद्धति) नहीं है उसे न लोगों के बीच सुख है न ही जंगल में। लोगों के बीच होने पर उनसे सम्पर्क उसे जलाता है (और) जंगल में उनसे सम्पर्क का अभाव (=निर्जनता, एकान्त)।

One who has no system in his actions gets no happiness either in [association with] the good people or in a forest. Contact with the people burns [him] while the absence of it does so in the forest.

यथा खनन् खनित्रेण भूतले वारि विन्दति।
तथा गुरुगतां विद्यां शुश्रूषुरधिगच्छति।।१६।।

जिस प्रकार कुदाली से खोदते हुए [व्यक्ति] ज़मीन के नीचे जल पा जाता है उसी प्रकार गुरु में स्थित विद्या को सुनने का इच्छुक [=ज्ञानोपार्जन का उत्सुक] शिष्य प्राप्त कर लेता है।

Just as one gets to subterranean water by digging with a spade, in the same way does a pupil knowledge embodied in teacher.

कर्मायत्तं फलं पुंसां बुद्धिः कर्मानुसारिणी।
तथाऽपि सुधियश्चार्या सुविचार्यैव कुर्वते।।१७।।

मनुष्यों को [मिलने वाला] फल उनके द्वारा किये गये कर्मों के अधीन है। बुद्धि उन्हीं कर्मों का अनुसरण करती है। तो भी श्रेष्ठ बुद्धिमान् लोग सोच–विचार करके ही काम करते हैं।

For the people the fruit depends upon the actions done [previously]. The mind acts in consonance with [those] actions.

Still the noble wise men proceed by properly examining everything.

एकाक्षरप्रदातारं यो गुरुं नाभिवन्दति।
श्वानयोनिशतं भुक्त्वा चाण्डालेष्वभिजायते।।१८।।

एक अक्षर (भी) सिखाने वाले गुरु का जो सत्कार नहीं करता वह कुत्ते की सौ योनियों को भोग चाण्डालों में जन्म लेता है।

One who does not show respect to [his] teacher who had taught him just a syllable, is born among Cāṇḍālas after passing through hundreds of births, as a dog.

युगान्ते चलते मेरुः कल्पान्ते सप्त सागराः।
साधवः प्रतिपन्नार्थान् न चलन्ति कदाचन।।१९।।

युग की समाप्ति पर मेरु डोलने लगता है और कल्प के अन्त में सात समुद्र (उन में तूफान आ जाता है)। (किन्तु) सज्जनों ने जो बात एक बार मान ली उससे वे टलते नहीं।

Meru may shake at the end of the Yuga, the seven oceans may turn rough at the end of the Kalpa. The good, however, would not turn away from what they had undertaken.

चतुर्दशोऽध्यायः

Chapter - 14

पृथिव्यां त्रीणि रत्नानि जलमन्नं सुभाषितम्।
मूढैः पाषाणखण्डेषु रत्नसंज्ञा विधीयते।।१।।

रत्न पृथ्वी पर तीन हैं– जल, अन्न और सुभाषित। मूर्ख पत्थर के टुकड़ों को रत्न की संज्ञा देते हैं।

There are three jewels on the earth: water, food and wise saying. The ignorant give the name of jewel to pieces of stone.

आत्मापराधवृक्षस्य फलान्येतानि देहिनाम्।
दारिद्यरोगदुःखानि बन्धनव्यसनानि च।।२।।

दरिद्रता, रोग, दुःख, बन्धन और विपत्तियां–ये अपने अपराधरूपी वृक्ष के फल हैं।

Poverty, disease, sufferings, captivity and adversities are the fruit of the tree of one's own faults.

पुनर्वित्तं पुनर्मित्रं पुनर्भार्या पुनर्मही।
एतत्सर्वं पुनर्लभ्यं न शरीरं पुनः पुनः।।३।।

धन, मित्र, पत्नी, भूमि–ये सब फिर भी मिल सकते हैं परन्तु शरीर नहीं।

One may have all this again: wealth, friend, wife, land but not the (human) body

बहूनां चैव सत्त्वानां समवायो रिपुञ्जयः।
वर्षधाराधरो मेघस्तृणैरपि निवार्यते।।४।।

बहुत से प्राणियों का समुदाय (इकट्ठ) शत्रु को जीत लेता है। वर्षा की धाराओं को अपने में लिये बादल को तिनके रोक देते हैं (=फूस से बनी झोंपड़ी में बादल का पानी नहीं पहुंचता है)।

The joining hands of a number of beings leads to victory over enemies. A cloud with torrents of rain in it is stopped even by straws.

जले तैलं खले गुह्यं पात्रे दानं मनागपि।
प्राज्ञे शास्त्रं स्वयं याति विस्तारं वस्तुशक्तितः।।५।।

जल में तेल, दुष्ट में गोपनीय बात, सुपात्र में तनिक सा भी दान, बुद्धिमान् में शास्त्र, वस्तु (=पदार्थ) की शक्ति से स्वयं फैल जाते हैं।

Oil in water, a secret [held by] a half-wicked person, a little charity to the deserving one and the Śāstra with the wise spreads by the very nature of things.

धर्माख्याने श्मशाने च रोगिणां या मतिर्भवेत्।
स सर्वदैव तिष्ठेच्चेत् को न मुच्येत बन्धनात्।।६।।

धार्मिक चर्चा के समय एवञ्च श्मशान में, रोगियों के मन में जो विचार आते हैं वे यदि हमेशा बने रहें तो कौन बन्धन से मुक्त नहीं होगा?

If the thoughts that cross the mind of the sick when a religious discourse is on or [when] they are in cremation ground, were to stay with them permanently, who would not get free from bondage?

उत्पन्नपश्चात्तापस्य बुद्धिर्भवति यादृशी।
तादृशी यदि पूर्वं स्यात् कस्य न स्यान्महोदयः।।७।।

पश्चात्ताप (की भावना) पैदा होने पर जिस प्रकार का (व्यक्ति का) चिन्तन होता है यदि वह दुष्कर्म करने से पहले हो जाता तो किसका महान् उत्कर्ष नहीं होता?

If the kind of thinking that develops after repentance [for misdeeds], were to have developed earlier, who would not gain great elevation?

दाने तपसि शौर्ये वा विज्ञाने विनये नये।
विस्मयो[3] नहि कर्तव्यो बहुरत्ना वसुन्धरा।।८।।

दान, तपस्या, शूरवीरता, विज्ञान, नम्रता तथा नीति को लेकर घमण्ड नहीं करना चाहिये, पृथ्वी पर बहुत रत्न हैं [=पृथ्वी पर एक से बढ़ कर एक दानी, तपस्वी आदि विद्यमान हैं।]

One should not feel conceited at charity, austerity, bravery, knowledge, humility and political wisdom. The earth has many jewels.

दूरस्थोऽपि न दूरस्थो यो यस्य मनसि स्थितः।
यो यस्य हृदये नास्ति समीपस्थोऽपि दूरतः।।६।।

जो जिसके मन में बसा है वह दूर होने पर भी दूर नहीं है। जो जिसके मन में नहीं है वह पास होते हुए भी दूर है।

One who is in one's mind is not far from him. One who is not in one's mind is far though near [physically].

यस्य चाप्रियमिच्छेत तस्य ब्रूयाद् सदा प्रियम्।
व्याधो मृगवधं कर्तुं गीतं गायति सुस्वरम्।।१०।।

व्यक्ति जिसका अनिष्ट चाहता हो उससे सदा मीठा बोले। शिकारी हिरन का वध करने के लिये मधुर स्वर से गाता है।

Whom one would like to harm, one should speak to him in sweet words. A hunter, when he wants to kill a deer, sings in sweet notes.

अत्यासन्ना विनाशाय दूरस्था न फलप्रदाः।
ते सेव्या मध्यभागेन राजा वह्निर्गुरुः स्त्रियः।।११।।

राजा, अग्नि, गुरु और स्त्रियां बहुत निकट हों तो नष्ट कर देते हैं, यदि दूर हों तो (उनसे) कोई लाभ नहीं मिलता। इसलिये बीच के मार्ग से (न उनके बहुत निकट और न ही बहुत दूर रह कर) उनका सेवन करना चाहिये।

King, fire, teacher [and] women, when too close, lead to destruction, when far, do not serve any purpose. So they have to be approached through the middle path [being neither too close, nor too far].

अग्निरापः स्त्रियो मूर्खाः सर्पा राजकुलानि च।
नित्यं यत्नेन सेव्यानि सद्यः प्राणहराणि षट्।।१२।।

अग्नि, जल, स्त्रियां, मूर्ख, सांप और राजपरिवार— इनका सदैव सावधानी से सेवन करना चाहिये। ये तत्काल प्राण लेने वाले हैं।

One should always deal with the following with care: fire, water, women, fools, serpents and royal families. These six kill instantly.

स जीवति गुणा यस्य यस्य धर्मः स जीवति।
गुणधर्मविहीनस्य जीवितं निष्प्रयोजनम्।।१३।।

जिसमें गुण हैं वह जीवित है। जो धार्मिक है वह जीवित है। जिसमें गुण और धर्म नहीं उसके जीने का कोई अर्थ नहीं है।

One who is endowed with qualities is alive. So is one who follows Dharma. One who does not have qualities, nor does he follow Dharma, his life has no meaning.

यदीच्छसि वशे कर्तुं जगदेकेन कर्मणा।
परापवादसस्येभ्यो गां चरन्तीं निवारय।।१४।।

If you want to bring round [the whole] world to you with [just] one action, hold back your tongue from speaking ill of others [The author/compiler indulges in pun here. *Go* means both the speech and the cow. *Carantīm* also has the double meaning. In the case of cow it means grazing and in the case of speech it means waxing, foraying, foraying into *parāpavāda*, defaming others].

प्रस्तावसदृशं वाक्यं प्रभावसदृशं प्रियम्।
आत्मशक्तिसमं कोपं यो जानाति स पण्डितः।।१५।।

प्रसंग के अनुरूप वचन, अपने प्रभाव के अनुरूप प्रिय वाक्य, अपने सामर्थ्य के अनुसार क्रोध को जो जानता है वह विद्वान् है।

One who knows words that go well with the context, the sweet speech that goes well with his glory [and] anger that befits his strength is wise.

एक एव पदार्थस्तु त्रिधा भवति वीक्षितः।
कुणपः कामिनी मांसं योगिभिः कामिभिः श्वभिः।।१६।।

एक ही पदार्थ दृष्टि भेद से तीन प्रकार का लगने लगता है— (स्त्री शरीर) योगियों को शव रूप लगता है, कामी जनों को कामिनी रूप और कुत्तों को मांस रूप।

The same object appears in three forms as it is viewed. [The female body] appears corpse to Yogins, a charming figure to the love-stricken and [just] flesh to dogs.

सुसिद्धमौषधं धर्मं गृहच्छिद्रं च मैथुनम्।
कुभुक्तं कुश्रुतं चैव मतिमान्न प्रकाशयेत्।।१७।।

बुद्धिमान् को चाहिये कि सही तरीके से बनाई गई दवा, धर्म कार्य, घर की कमज़ोरियां, मैथुन, खराब भोजन तथा सुनने में आई बुरी बातें किसी से प्रकट न करे (=किसी को बताये नहीं)

A wise man should not disclose [to others] well-compounded medicine, the religious activities, the weak points of the family, the sexual activity, bad food and bad words.

तावन्मौनेन नीयन्ते कोकिलैश्चैव वासराः।
यावत्सर्वजनानन्ददायिनी वाक् प्रवर्तते।।१८।।

तब तक कोयलें भी चुप रहकर दिन बिताती हैं जब तक सब लोगों को आनन्द प्रदान करने वाली उनकी वाणी (उनकी कूक) नहीं निकलती।

Till the time notes giving delight to all people issue forth from them the cuckoos spend their days in silence.

धर्मं धनं च धान्यञ्च गुरोर्वचनमौषधम्।
सुगृहीतं च कर्तव्यमन्यथा तु न जीवति।।१६।।

धर्म, धन, धान्य, गुरु का वचन, औषध– इन्हें अच्छी तरह अपना लेना चाहिये, अन्यथा [मनुष्य] जी नहीं सकता।

One should catch well Dharma, wealth, grains, words of teacher [and] medicine. Otherwise one would not survive.

त्यज दुर्जनसंसर्गं भज साधुसमागमम्।
कुरु पुण्यमहोरात्रं स्मर नित्यमनित्यताम्।।२०।।

दुर्जनों का संग छोड़ो, सज्जनों का संग अपनाओ। दिन–रात पुण्य कार्य करो, हमेशा अनित्यता को स्मरण रखो।

Avoid contact with the wicked, associate with the good, engage in good deeds day in and day out, keep in mind impermanence all the time.

पञ्चदशोऽध्यायः
Chapter - 15

यस्य चित्तं द्रवीभूतं कृपया सर्वजन्तुषु।
तस्य ज्ञानेन मोक्षेण किं जटाभस्मलेपनैः।।१।।

जिसका चित्त समस्त प्राणियों के प्रति दया से पिघल जाता है उसे ज्ञान, मोक्ष {और} जटाएं रखने और भस्म लगाने से क्या?

One whose mind melts out of compassion for all beings, what has he to do with knowledge, salvation, matted hair and besmearing of ashes?

एकमेवाक्षरं यस्तु गुरुः शिष्यं प्रबोधयेत्।
पृथिव्यां नास्ति तद् द्रव्यं यद् दत्त्वा चानृणी भवेत्।।२।।

एक अक्षर भी जो गुरु शिष्य को सिखाता है, पृथिवी में ऐसा कोई पदार्थ नहीं है जिसे देकर वह उससे उऋण हो सकता है।

Even a single syllable that a teacher teaches a pupil, there is no such object in the world by offering which he can repay the debt.

खलानां कण्टकानां च द्विविधैव प्रतिक्रिया।
उपानद्मुखभंगो वा दूरतो वा विसर्जनम्।।३।।

दुष्टों का और कांटों का दो प्रकार का ही इलाज है, या तो जूता उनके मुंह पर मारा जाय या उन्हें दूर फेंक दिया जाय।

There is only a twofold remedy for the wicked people and thorns: either punch their face with shoes or cast them away afar.

कुचैलिनं दन्तमलोपसृष्टं
बह्वाशिनं निष्ठुरभाषिणं च।
सूर्योदये चास्तमये शयानं
विमुञ्चति श्रीर्यदि चक्रपाणिः।।४।।

जो मैले कुचैले वस्त्र पहिने हुए है, दांत जिसके मैले हैं, जो बहुत खाता है (पेटू है), जो कठोर वचन बोलता है, और सूर्योदय और सूर्यास्त के समय सोया रहता है उसे लक्ष्मी छोड़ देती है चाहे वह स्वयं [भगवान्] विष्णु ही क्यों न हों।

One who puts on dirty clothes, has dirty teeth, eats a lot (is a glutton), speaks harshly, and sleeps at sun-rise and sun-set, him Lakṣmī leaves were he to be Lord Viṣṇu Himself.

त्यजन्ति मित्राणि धनैर्विहीनं
दाराश्च भृत्याश्च सुहृज्जनाश्च।
तं चार्थवन्तं पुराश्रयन्ते
ह्यर्थो हि लोके पुरुषस्य बन्धुः।।५।।

जब व्यक्ति के पास धन नहीं रहता तो मित्र, पत्नी, नौकर–चाकर, और प्रेमी जन– सब उसे छोड़ देते हैं। जब उसके पास धन आ जाता है तो वे फिर उससे चिपक जाते हैं। संसार में धन ही पुरुष का बन्धु है।

Friends, wife, servants and the loved ones forsake a person with no money. With money [back] they come back to him. Money verily is the relative of a person in the world.

अन्यायोपार्जितं वित्तं दश वर्षाणि तिष्ठति।
प्राप्ते चैकादशे वर्षे समूलं तद् विनश्यति।।६।।

गलत तरीके से कमाया हुआ धन दस वर्ष तक टिकता है। ग्यारहवां वर्ष लगने पर वह समूल नष्ट हो जाता है।

The wealth earned through unjust means stays for ten years. With the onset of the eleventh year it vanishes root and branch.

अयुक्तं स्वामिनो युक्तं युक्तं नीचस्य दूषणम्।
अमृतं राहवे मृत्युर्विषं शंकरभूषणम्।।७।।

स्वामी का अनुचित [कार्य] भी उचित होता है, नीच व्यक्ति का उचित [कार्य] भी अनुचित (अक्षरार्थ–दोषयुक्त) होता है। राहु के लिये अमृत मृत्यु है, शंकर के लिये विष अलंकरण है।

Even an improper [conduct] of master is proper, the proper work of a mean person is improper. Nectar is death for Rāhu. Poison is an embellishment (ornament) for Śiva.

तद् भोजनं यद् द्विजभुक्तशेषं
तत्सौहृदं यत् क्रियते परस्मिन्।
सा प्राज्ञता या न करोति पापं
दम्भं विना यः क्रियते स धर्मः।।८।।

भोजन वही है जो ब्राह्मणों के खाने के बाद बचा रहता है, मित्रता वही है जो दूसरे के लिये की जाती है, बुद्धिमत्ता वही है जो पाप नहीं करती, धर्म वही है जो दिखावे के लिये नहीं किया जाता।

That is the food which is the left over of the Brahmins, friendship is that which is cultivated for the sake of others, wisdom is that which does not commit sin (=which does not allow one to commit sin), Dharma is that which is followed with no show.

मणिर्लुठति पादाग्रे काचः शिरसि धार्यते।
क्रयविक्रयवेलायां काचः काचो मणिर्मणिः।।६।।

मणि चाहे पांव के अगले हिस्से में लोटता रहे और कांच सिर पर रख लिया जाय, खरीद–फ़रोख्त के समय कांच कांच ही रहेगा और मणि मणि ही।

Even if a jewel were to roll in front of foot and glass to be put on head, a jewel will remain jewel and glass will remain glass at the time of sale and purchase.

अनन्तशास्त्रं बहुलाश्च विद्या
अल्पश्च कालो बहुविघ्नता च।
यत्सारभूतं तदुपासनीयं
हंसो यथा क्षीरमिवाम्बुमध्यात्।।१०।।

शास्त्र अनन्त हैं, विद्याएं बहुत हैं, समय कम है, विघ्न बहुत हैं, जो सार हो उसे ले लेना चाहिये जैसे कि हंस जल में से दूध ले लेता है।

Innumerable are the Śāstras and many are the departments of knowledge. Time is scarce and obstructions many. It is the essence that one should take out just as does swan milk from water.

दूरागतं पथि श्रान्तं वृथा च गृहमागतम्।
अनर्चयित्वा यो भुङ्क्ते स वै चाण्डाल उच्यते।।११।।

दूर से आये, मार्ग में [चलने से] थके मांदे, बिना किसी काम के घर में आये व्यक्ति का आदर–सत्कार किये बिना जो खाता है, वह चाण्डाल कहा जाता है।

One who eats without proper courtesies to a person come to his house from afar, with no specific work, tired on account of the journey is called Cāṇḍāla.

पठन्ति चतुरो वेदान् धर्मशास्त्राण्यनेकशः।
आत्मानं नैव जानन्ति दर्वी पाकरसं यथा।।१२।।

लोग चारों वेद और धर्मशास्त्र बार–बार पढ़ते हैं फिर भी अपने आपको नहीं पहिचानते हैं जैसे कि करछुल खाने (में घूम कर भी) उस के रस (स्वाद) को नहीं।

[People] go through the four Vedas and the Dharmaśāstras time and again, still they do not know their own self like a ladle the taste of the cooked food.

धन्या द्विजमयी नौका विपरीता भवार्णवे।
तरन्त्यधोगताः सर्वे ह्युपरिस्थाः पतन्त्यधः।।१३।।

संसार रूपी समुद्र में उल्टी चलने वाली ब्राह्मणरूपी नाव धन्य है। इसके नीचे रहने वाले सभी तर जाते हैं और ऊपर रहने वाले नीचे गिर जाते हैं।

Blessed is the upturned boat in the form of Brahmins in the ocean of the world: those below it cross over while those up on it fall down.

अयममृतनिधानं नायकोऽप्योषधीना–
ममृतमयशरीरः कान्तियुक्तोऽपि चन्द्रः।
भवति विगतरश्मिर्मण्डलं प्राप्य भानोः
परसदननिविष्टः को लघुत्वं न याति।।१४।।

यह अमृत का भण्डार, वनस्पतियों का स्वामी, अमृत स्वरूप, कान्ति युक्त चन्द्रमा भी सूर्यमण्डल में पहुंच किरणविहीन हो जाता है, दूसरे के घर में पहुंच कौन छोटा नहीं हो जाता। (=महत्त्वहीन नहीं हो जाता)।

This moon, the repository of nectar, the lord of herbs, of the form of nectar itself, the lustrous one loses her rays

as she enters the solar system. Who does not get dwarfed in stature when in the abode of others?

अलिरयं नलिनीदलमध्यगः
कमलिनीमकरन्दमदालसः।
विधिवशात् परदेशमुपागतः
कुटजपुष्परसं बहु मन्यते।।१५।।

कमलिनी के पत्तों के बीच जब यह भंवरा था तो कमलिनी के मकरन्द की मस्ती के कारण अलसाया रहता था। वही जब दैवयोग से परदेस में चला गया है तो कुटज के पुष्पों के रस को ही बहुत समझने लगा है।

Getting into the leaves of the lotus plant this bee that used to be languid with the intoxication due to the honey of the [flowers] of the same, when gone abroad due to quirk of fate has begun to have a spẹcial taste for the honey of the Kuṭaja flowers.

पीतः क्रुद्धेन तातश्चरणतलहतो वल्लभो येन रोषा-
दा बाल्याद्विप्रवर्यैः स्ववदनविवरे धार्यते वैरिणी मे।
गेहं मे छेदयन्ति प्रतिदिवसमुमाकान्तपूजानिमित्तं
तस्मात् खिन्ना सदाऽहं द्विजकुलनिलयं नाथ नित्यं त्यजामि।।१६।।

[लक्ष्मी विष्णु से कहती है] नाथ! मैं निरन्तर (=एक के बाद एक कारणवश) खिन्न हुई ब्राह्मणों के घर को सदा छोड़े रहती हूं (=वहां कभी नहीं जाती)। कारण- क्रुद्ध (ऋषि अगस्त्य) ने मेरे पिता [समुद्र] को पी लिया, जिसने [ऋषि भृगु ने] क्रोध में आकर मेरे प्रियतम [विष्णु] पर पादप्रहार कर दिया, बचपन से ही विप्रवर मेरी शत्रु [सौत-सरस्वती] को अपने मुख में लिये रहते हैं, [लोग] प्रतिदिन शिव की पूजा के लिये मेरे घर (कमल) को तोड़ते रहते हैं।

[Lakṣmī's words to Viṣṇu] O Lord, in disgust I avoid always the house of the Brahmins because the angry one (the sage Agastya) drank my father (the ocean), [the sage Bhṛgu] hit with his foot my husband (Viṣṇu), right from childhood, Brahmins carry my adversary (Sarasvatī, the co-wife of Viṣṇu) in the cavity of their mouth, [people] day in and day out destroy my house (the lotus) for offering worship to Śiva.

बन्धनानि खलु सन्ति बहूनि
प्रेमरज्जुदृढबन्धनमन्यत्।
दारुभेदनिपुणोऽपि षडङ्घ्रि–
र्निष्क्रियो भवति पंकजकोशे।।१७।।

बन्धन तो (इस संसार में) बहुत से हैं पर प्रेम की रस्सी का सुदृढ़ बन्धन और ही किस्म का है। लकड़ी में छेद करने में कुशल भंवरा भी कमल के भीतर पहुंच निष्क्रिय हो जाता है।

There are many kinds of bonds [in this world] but the strong bond of the thread of love is of a different kind. A bee with the expertise in piercing the wood turns motionless in the closed lotus.

छिन्नोऽपि चन्दनतरुर्न जहाति गन्धं
वृद्धोऽपि वारणपतिर्न जहाति लीलाम्।
यन्त्रार्पितो मधुरतां न जहाति चेक्षुः
क्षीणोऽपि न त्यजति शीलगुणान् कुलीनः।।१८।।

चन्दन का वृक्ष कट जाने पर भी अपनी महक नहीं छोड़ता, गजराज बूढ़ा हो जाने पर भी अपनी लीला को नहीं छोड़ता, ईख कोल्हू में पेरे जाने पर भी अपनी मिठास नहीं छोड़ता, कुलीन दरिद्र होने पर भी चारित्रिक गुणों को नहीं छोड़ता।

The sandalwood tree, even when cut, does not give up its fragrance; a lordly elephant, even when old, does not give

up its playfulness; sugarcane, even when inserted in machine, does not give up its sweetness. One born in a high family, even when reduced [to poverty], does not give up the qualities going with good conduct.

उर्व्यां कोऽपि महीधरो लघुतरोऽङ्गुल्या धृतो लीलया
तेन त्वं दिवि भूतले च सततं गोवर्धनो गीयसे।
त्वां त्रैलोक्यधरं वहामि कुचयोरग्रे न तद् गण्यते
किं वा केशव! भाषणेन बहुना पुण्यैर्यशो लभ्यते।।१६।।

(यशोदा कहती हैं) पृथ्वी पर किसी छोटे से पर्वत को खेल ही खेल में (अनायास) उंगली पर रख लिया इससे तुम सदैव द्युलोक और भूलोक में गोवर्धन नाम से जाने जाते हो। त्रिलोकी को धारण करने वाले तुम्हें मैं स्तनों के अग्रभाग (=चूचुक) पर धारण करती हूं (फिर भी कोई उसकी चर्चा तक नहीं करता)। हे केशव, बहुत क्या कहना। पुण्यों से ही यश मिलता है।

A small hillock on the earth was held (by you) on a finger with ease. Because of this [your praise is] sung under the name of Govardhana both in the heaven and the earth. [Yaśodā's remark:] I carry you, O Keśava, the carrier of all the worlds, on the tips of my breasts. [Still nobody sings my praises].O Keśava, enough of words. Fame comes from luck.

षोडशोऽध्यायः

Chapter - 16

न ध्यातं पदमीश्वरस्य विधिवत्संसारविच्छित्तये
स्वर्गद्वारकपाटपाटनपटुर्धर्मोऽपि नोपार्जितः।
नारीपीनपयोधरोरुयुगलं स्वप्नेऽपि नालिंगितं
मातुः केवलमेव यौवनवनच्छेदे कुठारा वयम्।।१।।

भव [बन्धन] को काटने के लिये सही सही ढंग से भगवान् के चरण कमल में ध्यान नहीं लगाया, स्वर्ग के द्वार के किवाड़ खोलने में निपुण धर्म का उपार्जन भी नहीं किया, स्त्री के सुपुष्ट स्तनों और ऊरुओं का सपने में भी आलिंगन नहीं किया। हम तो केवल माता के यौवनरूपी वन के काटने में कुल्हाड़ी बन कर रह गये।

I did not concentrate on the abode/foot of the Lord as per the prescribed rites for striking down the circuit of worldly existence, did not earn merit capable of opening wide the gates of heaven, did not embrace even in dream a woman's plum breasts and thighs. I have just been an axe in felling the forest in the form of the youth of the mother.

जल्पन्ति सार्धमन्येन पश्यन्त्यन्यं सविभ्रमाः।
हृदये चिन्तयन्त्यन्यं न स्त्रीणामेकतो रतिः।।२।।

बात किसी और से करती हैं, हाव–भाव के साथ देखती किसी और को हैं, (और) मन में सोचती किसी और के बारे में है; स्त्रियों की किसी एक में आसक्ति नहीं होती।

They talk to some one else, cast amorous glances on another one, think of still another one in their heart, women are not attached to one man (alone).

यो मोहान्मन्यते मूढो रक्तेयं मयि कामिनी।
स तस्या वशगो भूत्वा नृत्येत् क्रीडाशकुन्तवत्।।३।।

जो मूर्ख अज्ञानवश यह समझता है कि यह स्त्री मुझमें अनुरक्त है वह उसके बस में होकर पालतू पक्षी की तरह (उसके इशारों पर) नाचता है।

A dullard who through ignorance thinks that this woman is in love with him, dances, being under her control, [to her tune] like a pet bird.

कोऽर्थान् प्राप्य न गर्वितो विषयिणः कस्यापदोऽस्तं गताः
स्त्रीभिः कस्य न खण्डितं भुवि मनः को नाम राज्ञां प्रियः।
कः कालस्य न गोचरत्वमगमत् कोऽर्थी गतो गौरवं
को वा दुर्जनवागुरासु पतितः क्षेमेण यातः पथि।।४।।

ऐसा कौन है जो धन मिल जाने पर अहंकारी नहीं होता, विषय भोगों में लिप्त किस [व्यक्ति] की आपत्तियां समाप्त हुईं, इस संसार में स्त्रियों ने किसका मन चूर–चूर नहीं किया, राजाओं का कौन प्यारा है, कौन काल के चंगुल में नहीं पड़ा, किस याचक को सम्मान मिला, मार्ग में (चलते–चलते) दुर्जनों के जालों में फंसा कौन सुख से निकल पाया?

Who having obtained wealth does not turn proud? The miseries of what sensualist have come to an end? Whose mind on the earth is not shattered by women? Who is the favourite of kings? Who has not fallen into the clutches of death? What suppliant has evoked respect (from others)? Who getting trapped in the nooses of the wicked has come out safely?

न निर्मितः केन न दृष्टपूर्वः
न श्रूयते हेममयः कुरंगः।

तथाऽपि तृष्णा रघुनन्दनस्य
विनाशकाले विपरीतबुद्धिः।।५।।

सोने का हिरन न किसी ने बनाया, न पहले वह [कभी] देखा गया, न उसके बारे में सुना ही तो भी श्रीराम की तृष्णा [तीव्र इच्छा] [उसे पाने के लिये जगी]। जब विनाश का समय आता है तो बुद्धि पलट जाती है।

The golden deer was not made by some one, nor was it seen earlier, nor was it heard about. When adversity is round the corner, mind goes astray.

गुणैरुत्तमतां याति नोच्चैरासनसंस्थितः।
प्रासादशिखरस्थोऽपि काकः किं गरुडायते?।।६।।

[व्यक्ति] गुणों से ऊंचा बनता है, ऊंचे आसन पर बैठने से नहीं। महल के सबसे ऊंचे भाग पर बैठा हुआ कौआ क्या गरुड़ बन जाता है?

One goes up by one's qualities and not by occupying a high seat. Does a crow by sitting on the top of a palace turn into Garuḍa?

गुणाः सर्वत्र पूज्यन्ते न महत्योऽपि सम्पदः।
पूर्णेन्दुः किं तथा वन्द्यो निष्कलंको यथा कृशः।।७।।

गुणों की सर्वत्र पूजा होती है न कि विशाल सम्पत्ति की। क्या पूर्ण चन्द्रमा (पूनम का चांद) की उस तरह वंदना की जाती है जिस तरह कि कलंक रहित क्षीण (दूज के चांद) की।

It is qualities that elicit praise and not enormous riches. Does the full moon evoke as much worship as the weak but spotless one the day after the full moon day?

परप्रोक्तगुणो यस्तु निर्गुणोऽपि गुणी भवेत्।
इन्द्रोऽपि लघुतां याति स्वयं प्रख्यापितैर्गुणैः।।८।।

जिसके गुणों का बखान दूसरे करें वह गुणहीन व्यक्ति भी गुणी हो जाता है। अपने गुणों का स्वयं बखान करने से तो इन्द्र भी छोटा बन जाता है।

With others proclaiming his qualities, even a person with no qualities comes to possess them. With his own self proclaiming his qualities even Indra loses his stature.

विवेकिनमनुप्राप्ता गुणा यान्ति मनोज्ञताम्।
सुतरां रत्नमाभाति चामीकरनियोजितम्।।६।।

विवेकशील व्यक्ति को पाकर गुण सुन्दर लगने लगते हैं [=गुणों में निखार आ जाता है]। जब रत्न को सोने में जड़ दिया जाता है तो उसकी शोभा और बढ़ जाती है।

Qualities appear more charming when associated with a wise person. A jewel when united with [studded in] gold shines all the more.

गुणैः सर्वज्ञतुल्योऽपि सीदत्येको निराश्रयः।
अनर्घ्यमपि माणिक्यं हेमाश्रयमपेक्षते।।१०।।

गुणों से सर्वज्ञ (=ईश्वर) तुल्य व्यक्ति भी, यदि अकेला और बेसहारा हो तो दुःख पाता है। बेशकीमती हीरे को भी सोने के सहारे की अपेक्षा होती है।

Even he who equals the omniscient one through his qualities, if alone, with none to support him, comes to grief. Even a priceless jewel needs the support of gold.

अतिक्लेशेन ये चार्था धर्मस्यातिक्रमेण तु।
शत्रूणां प्रणिपातेन ते ह्यर्था मा भवन्तु मे।।११।।

जो धन बहुत कष्ट उठाने से, धर्म का उल्लंघन करने से तथा शत्रुओं के आगे झुकने से मिलता हो वह धन मुझे न ही मिले तो अच्छा।

The wealth that is earned through great suffering, through transgression of Dharma and surrender to enemies, may that (wealth) not come to me.

किं तया क्रियते लक्ष्म्या या वधूरिव केवला।
या तु वेश्येव सामान्या पथिकैरपि भुज्यते।।१२।।

उस लक्ष्मी से क्या जो कुल वधू के समान अकेली रहती है। केवल एक अर्थात् पति के द्वारा– दूसरे पक्ष में स्वामी के द्वारा उपभोग की जाती है। मान्या, मान के योग्य, वह है [पदच्छेद– सा+मान्या] जो सामान्य वेश्या की तरह पथिकों के द्वारा भी उपभोग में लाई जाती है।

What is the use of that Lakṣmī (wealth) who like a house-wife is just a stand alone one [to be enjoyed by the master/husband]? That one is deserving of honour which like an ordinary harlot is enjoyed even by the wayfarers.

धनेषु जीवितव्येषु स्त्रीषु चाहारकर्मसु।
अतृप्ताः प्राणिनः सर्वे याता यास्यन्ति यान्ति च।।१३।।

धन, जीवन–धारण योग्य पदार्थों, स्त्रियों और भोजनादि क्रियाओं से तृप्ति न जिनकी हो पाई वे सभी प्राणी चले गये, चले जायेंगे और जा रहे हैं।

All people not satisfied with wealth, the means of subsistence, women, eating and such other activities have left [for heavenly abode], will leave and are leaving.

क्षीयन्ते सर्वदानानि यज्ञहोमबलिक्रियाः।
न क्षीयन्ते पात्रदानमभयं सर्वदेहिनाम्।।१४।।

हर प्रकार के दान, यज्ञ, होम (अग्निहोत्र) एवं बलि [वैश्वदेवादि] क्रियाएं नष्ट हो जाती हैं, नहीं नष्ट होते हैं तो दान के योग्य व्यक्ति को दिया गया दान और समस्त प्राणियों को दिया गया अभय [दान]।

All kinds of charities, sacrifices, homa (one of the five *yajñas* to be daily performed by a Brahmin), an offering as religious practice perish but not perish charity to a deserving person and the promise/ assurance of safety to all beings.

तृणं लघु तृणात्तूलं तूलादपि च याचकः।
वायुना किं न नीतोऽसौ मामयं याचयिष्यति।।१५।।

तिनका हल्का होता है, उससे भी हल्की होती है रुई, उससे भी हल्का होता है याचक (मांगने वाला, भिखारी)। क्या ऐसा नहीं कि वायु उसे इसलिये नहीं उठा के ले गई कि यह मुझसे [कुछ] मांग बैठेगा?

A straw is light, lighter than that is cotton, still lighter than that is a suppliant. Was it not that he was not carried away by wind [because of the thought] that he would beg of it?

वरं प्राणपरित्यागो मानभंगेन जीवनात्।
प्राणत्यागे क्षणं दुःखं मानभंगे दिने दिने।।१६।।

अपमानित होकर जीने की अपेक्षा मर जाना अच्छा। मरने में तो क्षण भर के लिये ही कष्ट होता है, अपमानित होने में प्रतिदिन का कष्ट है।

It is better to die than to live under insult. In death it is a momentary pain, in insult it is a daily affair.

प्रियवाक्यप्रदानेन सर्वे तुष्यन्ति जन्तवः।
तस्मात्तदेव वक्तव्यं वचने का दरिद्रता।।१७।।

मीठे बोल बोलने से सभी प्राणी प्रसन्न होते हैं। इसलिये वे ही बोलने चाहियें, (मीठा) बोलने में क्या कंजूसी?

All beings feel happy with sweet words. So one should go in for them. Why is the parsimony in (sweet) words?

संसारकटुवृक्षस्य द्वे फले अमृतोपमे।
सुभाषितं च सुस्वादु संगतिः सुजने जने।।१८।।

संसाररूपी कड़वे वृक्ष के दो फल अमृत के समान (अर्थात् मधुर) होते हैं, एक तो अत्यन्त रसीला सुन्दर वचन और दूसरा सज्जनों का संग।

The poisonous tree called the world yields two fruits that are nectar-like, one, the fully savoury wise-saying, [the second,] the association with the good.

बहुजन्मसु चाभ्यस्तं दानमध्ययनं तपः।
तेनैवाभ्यासयोगेन तदेवाभ्यस्यते पुनः।।१६।।

अनेक जन्मों में दान, अध्ययन और तप का (मैंने) अभ्यास किया। उसी अभ्यास के परिणामस्वरूप उसी का फिर से अभ्यास [मैं] कर रहा हूं।

[I] practised charity, study and austerity in many births. Due to contact with that repeated practice I repeat the same again.

पुस्तकेषु च या विद्या परहस्तेषु यद्धनम्।
उत्पन्नेषु च कार्येषु न सा विद्या न तद्धनम्।।२०।।

पुस्तकों में जो विद्या है और दूसरों के हाथ में गया जो धन है, जब काम पड़ता है तो न वह विद्या [काम आती है] न वह धन।

The knowledge in books and the money [gone] in the hands of others, in time of need have no meaning (lit. the knowledge is not there nor is so the wealth).

सप्तदशोऽध्यायः
Chapter - 17

पुस्तकेषु च याऽधीतं नाधीतं गुरुसन्निधौ।
सभामध्ये न शोभन्ते जारगर्भा इव स्त्रियः।।१।।

जो [विद्या] पुस्तकों में पढ़ी [पर] गुरु से [जिसका] अध्ययन नहीं किया वे [उस विद्या को जानने वाले] सभा में व्यभिचार से गर्भ धारण करने वाली स्त्रियों की तरह जमते नहीं हैं।

Those who have read books but have not studied with teachers, create no impression in an assembly like women carrying through illicit contact.

कृते प्रतिकृतं कुर्याद् हिंसने प्रतिहिंसनम्।
तत्र दोषो न पतति दुष्टे दुष्टं समाचरेत्।।२।।

उपकार के बदले में प्रत्युपकार करना चाहिये और हिंसा के बदले में हिंसा। इसमें कोई दोष नहीं है। दुष्ट के प्रति दुष्टता का व्यवहार करे।

A good turn is to be repaid by good turn and violence by counter-violence. There is nothing wrong in it. One should behave in a wicked manner with the wicked.

यद् दूरं यद् दुराराध्यं यच्च दूरे व्यवस्थितम्।
तत्सर्वं तपसा साध्यं तपो हि दुरतिक्रमम्।।३।।

जो दूर है, कष्ट से जिसकी आराधना की जा सकती है, जो दूर–स्थित है वह सब तपस्या से पाया जा सकता है। तपस्या का उल्लंघन करना कठिन है (=तपस्या का पार पाना कठिन है)।

All that is afar, difficult to cultivate [and] is located at a distance is possible of achievement through penance. It is difficult to hinder the operation of penance.

लोभश्चेदगुणेन किं पिशुनता यद्यस्ति कि पातकैः
सत्यं चेत्तपसा च किं शुचि मनो यद्यस्ति तीर्थेन किम्।
सौजन्यं यदि किं गुणैः सुमहिमा यद्यस्ति किं मण्डनैः
सद्विद्या यदि किं धनैरपयशो यद्यस्ति किं मृत्युना।।४।।

(१) यदि लालच है तो [अन्य] अवगुणों से क्या? चुगली यदि है तो [अन्य] पापों से क्या? सत्य [भाषण] यदि है तो तपस्या से क्या? यदि पवित्र मन है तो तीर्थ से क्या? यदि सज्जनता है तो अन्य गुणों से क्या? यदि सुयश है तो सजावट से क्या? यदि उत्तम विद्या है तो धन से क्या? यदि अपयश है तो मृत्यु से क्या?

(२) लोभ होने पर अवगुणों का, चुगलखोरी होने पर पापों का, सत्य [भाषण] होने पर तप का, शुद्ध मन होने पर तीर्थ यात्रा का, सज्जनता होने पर गुणों का, सुयश होने पर आभूषणों का, उत्तम विद्या होने पर धन का, अपयश होने पर मृत्यु का होना न होना बराबर है।

If there is avarice, where is the need for [other]vices; if there is backbiting, where is the need for [other] sins; if there is truthfulness, where is the need for penance; if there is pure mind, where is the need for pilgrimage; if there is goodness where is the need for [other] qualities; if there is fame where is the need for ornaments; if there is high learning where is the need for wealth, if there is disrepute, where is the need for death?

Another translation:

Any kind of vice is more than compensated by avarice; sin by backbiting; penance by truthfulness, pilgrimage by purity of mind, qualities by goodness, ornaments by fame, wealth by high learning and infamy by death.

पिता रत्नाकरो यस्य लक्ष्मीर्यस्य सहोदरा।
शंखो भिक्षाटनं कुर्यान्नादत्तमुपतिष्ठते।।५।।

रत्नों की खान (=समुद्र) जिसका पिता हो, लक्ष्मी जिसकी सगी बहन हो वह शंख यदि भीख मांगता फिरे तो समझना चाहिये कि बिना दिये कुछ मिलता नहीं।

If conch with the repository of jewels (=ocean) as the father, Lakṣmī as the real sister were to go begging, [it means] nothing comes to one without giving.

अशक्तस्तु भवेत्साधुर्ब्रह्मचारी च निर्धनः।
व्याधिष्ठो देवभक्तश्च वृद्धा नारी पतिव्रता।।६।।

जब व्यक्ति अशक्त हो जाता है तो वह साधु बन जाता है, जब निर्धन हो जाता है तो ब्रह्मचारी बन जाता है, रोगों से मारा हुआ देवभक्त हो जाता है, बूढ़ी स्त्री पतिव्रता हो जाती है।

When one becomes weak (=loses virility) one turns saint, when turned poor becomes celebate, when under the grip of diseases turns devotee of gods, when old a woman turns a faithful wife.

नान्नोदकसमं दानं न तिथिर्द्वादशीसमा।
न गायत्र्याः परो मन्त्रः न मातुः परदैवतम्।।७।।

अन्न और जल के दान के समान और कोई दान नहीं है, द्वादशी के समान और कोई तिथि नहीं है, गायत्री के समान अन्य कोई मन्त्र नहीं है, माता से बढ़ कर और कोई देवता नहीं है।

There is no gift like that of food and water, no lunar day comparable to the twelfth one, no Mantra more effective than Gāyatrī, no deity higher than mother.

तक्षकस्य विषं दन्ते मक्षिकायास्तु मस्तके।
वृश्चिकस्य विषं पुच्छे सर्वाङ्गे दुर्जने विषम्।।८।।

सांप के दांत में, मक्खी के सिर में और बिच्छू की पूँछ में विष रहता है। पर दुर्जन के तो वह सारे शरीर में रहता है।

The poison rests in the fang of snake, head of fly and tail of scorpion but it permeates the entire body of a wicked person.

पत्युराज्ञां बिना नारी उपोष्य व्रतधारिणी।
आयुष्यं हरते भर्तुः सा नारी नरकं व्रजेत्।।६।

बिना पति की अनुमति से जो नारी उपवास रख कर व्रत लेती है वह पति की आयु का हरण करती है। वह नारी नरकगामिनी होती है।

A woman who goes in for a vow having undergone fasting with no permission for it from her husband takes away from his life. She goes to hell.

न दानैः शुध्यते नारी नोपवासशतैरपि।
न तीर्थसेवया तद्वद् भर्तुः पादोदकैर्यथा।।१०।।

नारी न विविध प्रकार से दान देने से, न सैकड़ों उपवासों से और न ही तीर्थाटन से शुद्ध हो पाती है। वह तो पति के उस जल के सेवन से, जिससे उसके पांव धोये गये हैं, शुद्ध हो पाती है।

A woman is not as much purified by charities, nor by hundreds of fasts, nor still by pilgrimages, as by the water with which the feet of her husband have been washed.

पाद्यपीतावशेषं च सन्ध्याशेषं तथैव च
श्वानमूत्रसमं तोयं पीत्वा चान्द्रायणं चरेत्।।११।।

पांव धोने से बचा हुआ, पीने से बचा हुआ और सन्ध्या करने से बचे हुए जल को, जोकि कुत्ते के मूत्र के समान है, पीकर चान्द्रायण व्रत करना चाहिये।

Having had water left over after the washing of feet, that left over after drinking and that left over after performing Sandhyā, (the worship in the morning, the noon and the evening), which is like the urine of a dog, one should go in for Cāndrāyaṇa (an expiatory penance, in it the daily quantity of food, which consists of fifteen mouthfuls at the full moon, is diminished by one mouthful a day during the dark fortnight till it is reduced to zero at the new moon and is increased in the like manner during the bright fortnight).

दानेन पाणिर्न तु कंकणेन
स्नानेन शुद्धिर्न तु चन्दनेन।
मानेन तृप्तिर्न तु भोजनेन
ज्ञानेन मुक्तिर्न तु मण्डनेन।।१२।।

दान से हाथ की [शोभा होती है] न कि कंगन से, शुद्धि स्नान से होती है न कि चंदन से, तृप्ति सम्मान से होती है न कि भोजन से, मुक्ति ज्ञान से होती है न कि साज–सज्जा से।

The beauty of hand lies in charity and not in bracelet, the purity [of the body is achieved] through bath and not sandalwood, the full satisfaction is achieved by respect/honour

and not by food, emancipation is attained by knowledge and not by make-up.

नापितस्य गृहे क्षौरं पाषाणे गन्धलेपनम्।
आत्मरूपं जले पश्यन् शक्रस्यापि श्रियं हरेत्।।१३।।

नाई के घर में (जाकर) हजामत बनवाना, पत्थर पर सुगन्धित द्रव्यों का लेप, अपनी शक्ल पानी में देखना इनसे इन्द्र की शोभा भी जाती रहती है।

To have shave in the house of a barber, to anoint a stone with unguents and to look at one's own figure in water take away the glory even of Indra.

सद्यः प्रज्ञाहरा तुण्डी सद्यः प्रज्ञाकरी वचा।
सद्यः शक्तिहरा नारी सद्यः शक्तिकरं पयः।।१४।।

तुण्डी (कुन्दरु) तत्काल बुद्धि को नष्ट करती है, वचा तत्काल बुद्धि बढ़ाती है, स्त्री तत्काल शक्ति का क्षय करती है, दूध तत्काल शक्ति बढ़ाता है।

Tuṇḍī takes away intelligence instantly, Vacā adds to it likewise, a woman depletes vitality in the same manner [while] milk adds to it likewise.

परोपकरणं येषां जागर्ति हृदये सताम्।
नश्यन्ति विपदस्तेषां सम्पदः स्युः पदे पदे।।१५।।

जिन भद्र पुरुषों के हृदय में परोपकार की भावना जगी रहती है, उनकी विपत्तियां दूर हो जाती हैं और कदम कदम पर सम्पत्ति उन्हें मिलती जाती है।

The adversities of those good men in whose heart the feeling of doing good to others is awakened disappear while prosperity comes to them at every step.

यदि रामा यदि च रमा
यदि तनयः सविनयगुणोपेतः।
यदि तनये तनयोत्पत्तिः
सुखमिन्द्रे किमाधिक्यम्?।।१६।।

यदि सुन्दर स्त्री है और लक्ष्मी है, यदि विनय–गुण–सम्पन्न पुत्र है, यदि पुत्र के आगे पुत्र है तो इन्द्र के पास ऐसा कौन सा सुख है जो अधिक है।

If one has a beautiful wife as also Lakṣmī (=riches), if he has a son endowed with the quality of humility, if a son is born to a son, what more happiness is there with Indra?

आहारनिद्राभयमैथुनानि समानि चैतानि नृणां पशूनाम्।
ज्ञानं नराणामधिको विशेषो ज्ञानेन हीनाः पशुभिः समानाः।।१७।।[४]

मनुष्यों और पशुओं में खाना, सोना, डरना, और स्त्री–संग करना (ये चारों क्रियायें) समान ही हैं। मनुष्यों में एक गुण अधिक है और वह है ज्ञान। यदि (मनुष्यों में) ज्ञान न हो तो वे पशु के समान हैं।

Eating, sleeping, fear [and] copulation are common to both human beings and animals. The only difference is in knowledge. Those devoid of knowledge are as good as animals.

दानार्थिनो मधुकरा यदि कर्णतालै–
दूरीकृता करिवरेण मदान्धबुद्ध्या।
तस्यैव गण्डयुगमण्डनहानिरेषा
भृङ्गाः पुनर्विकचपद्मवने वसन्ति।।१८।।

यदि मद में अन्धे होकर गजराज ने दान (=गजमद, गज की कनपट्टियों पर बहने वाला मदजल) के इच्छुक भंवरों को कानों

की फड़फड़ाहट से दूर भगा दिया तो उसी के गण्डस्थलों की शोभा की हानि हुई, भंवरे तो फिर भी खिले कमलों की क्यारियों में रहने लग जाते हैं।

If blinded by intoxication a mighty elephant drives away the bees coming to it for rut by flapping the ears, it is the loss of the charm of its own temples. As for the bees, they find their abode in the bed of blooming lotuses.

राजा वेश्या यमो ह्यग्निस्तस्करो बालयाचकौ।
परदुःखं न जानन्ति अष्टमो ग्रामकण्टकः।।१६।।

राजा, वेश्या, यम, अग्नि, चोर, बच्चा, भिखारी तथा आठवां गांव का कांटा– इन्हें दूसरे के दुःख का बोध नहीं होता।

King, harlot, Yama, fire, thief, child, beggar and the eighth one, the village thorn, have no idea of the pain of others.

व्यालाश्रयाऽपि विफलाऽपि सकण्टकाऽपि
वक्राऽपि पङ्किलभवाऽपि दुरासदाऽपि।
गन्धेन बन्धुरसि केतकि! सर्वजन्तोर्
एको गुणः खलु निहन्ति समस्तदोषान्।।२०।।

अरे केवड़े, सांप तेरे में घर किये हैं, फल तेरे पास हैं नहीं, कांटे तुम में हैं, तुम टेढ़े–मेढ़े हो, कीचड़ में तुम पैदा होते हो, तुम तक पहुंचना कठिन है, तो भी (=इतना सब होते हुए भी) अपनी खुशबू से तुम सभी जीवों के बन्धु (=प्यारे) हो। एक गुण सभी दोषों को ढ़क देता है।

O you the Ketaka plant, you are curved, you grow in a muddy place, you are not easy of reach, snakes take recourse in you, you have no fruit, you have thorns, still you through

your smell, are dear to all beings. Just one, single, good quality of yours cancels out all the bad ones.

अधः पश्यसि किं बाले पतितं तव किं भुवि।
रे रे मूर्ख न जानासि गतं तारुण्यमौक्तिकम्।।२१।।

[एक मनचला युवक एक अधेड़ उम्र की स्त्री से परिहास से पूछता है– व्यंग्य से वह उसे बाले, बच्ची कहता है] बच्ची, नीचे की ओर क्या देख रही है, ज़मीन पर तेरा क्या गिरा है? [अधेड़ उम्र की स्त्री का उत्तर–] अरे मूर्ख, तुझे नहीं मालूम। यौवनरूपी मोती गिर पड़ा है [उसे ढूंढ रही हूं]।

[Out of fun a young man asks a middle-aged woman; he addresses her in chuckle as *bāle*, young woman] O young woman, why are you looking down? What of yours has fallen down on the earth? [The middle-aged one answers] O you fool, you do not know. The pearl in the form of my youth has fallen. [I am looking for it].

(पाद टिप्पणियां) (Footnotes)

१. सम्भावनायां लिङ् से सम्भावना में यहां लिङ् लकार है। इसलिये अनुवाद किया–पा सकता है।

२. This translation is suggested by my friend Dr. Satya Vrat Varma.

३. सम्भवतः वि का यहां अस्थाने प्रयोग है। तात्पर्य नीतिकार का स्मयः से लगता है जिस का अर्थ है घमण्ड। स्वारस्य इसी में है।

४. यह पद्य हितोपदेश में (कथामुख २५) में किंचित् रूपान्तर में इस रूप में उपलब्ध होता है–आहारनिद्राभयमैथुनं च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्। धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण: हीनाः पशुभिः समानाः।।

श्लोकानुक्रमणिका

आ

क

ख

त

द

प

म

य

र

ल

व

श

स

ह

Born on 29th September 1930, **Prof. Satya Vrat Shastri** had his early education under his father, Prof. Charu Deva Shastri. He was consistently top rank holder up to Post-Graduation and won University Medals. After doing his Ph. D. at the Banaras Hindu University he joined the University of Delhi where during the forty years of his teaching career he held important positions of the Head of the Department of Sanskrit and Dean of the Faculty of Arts. He was also the Vice-Chancellor of Shri Jagannath Sanskrit University, Puri, Orissa. He is the first recipient of the Jnanpith Award in Sanskrit, 2009 and the Padma Bhushan Award, 2010

He has the distinction of having been Visiting Professor in five Universities on three Continents. Among his many foreign students the most prominent is Her Royal Highness Maha Chakri Sirindhorn, the Princess of Thailand. He has attended and chaired a number of national and international conferences and seminars and delivered more than a hundred lectures in Universities and institutions of higher learning in Europe, North America, Southeast Asia and the Far East.

Both a creative writer and a literary critic, Prof. Satya Vrat Shastri has to his credit three Sanskrit Mahākāvyas of about a thousand stanzas each, a Prabandhakāvya, a Patrakāvya (in two volumes), three Khaṇḍakāvyas, the first ever diary in Sanskrit *Dine Dine Yāti Madīyajīvitam* and the first ever autobiography in Sanskrit *Bhavitavyānāṃ Dvārāṇi Bhavanti Sarvatra.* The well-acclaimed critical work, *The Rāmāyaṇa-A Linguistic Study* which is the first ever linguistic appraisal of not only the Vālmīki-*Rāmāyaṇa* but of any extant Sanskrit work, *Kālidāsa Studies* in two volumes, two studies on Thailand, *Sanskrit and Indian Culture in Thailand* and *Thaideśa kā Brāhmaṇa, Discovery of Sanskrit Treasures* (in seven volumes), *Sanskrit Studies–New Perspectives* and *Sanskrit Writings of European Scholars,* more than a century and a half of research articles and Forewords to a hundred and thirty books are his contributions as a critic. He has enormous experience in translation work. He has translated A.A. Macdonell's *A Vedic Grammar for Students* in Hindi, *Śrīrāmacaritābdhiratnam* of Nityananda Shastri in English, the thousand Subhāṣitas, wise sayings, the *Subhāṣitasāhasrī* in Hindi and English and the select poems in different languages of poet laureates of Europe in Sanskrit. He is the subject matter of seventeen theses for the degrees of M.Phil., Ph.D. and D.Litt. in Indian Universities.

He is the recipient of eighty three honours and awards, national and international, including Padma Shri, Padma Bhushan, President of India Certificate of Honour, Thai Royal Decoration "The Most Admirable Order of Direk Gunabhorn", the Honour "Autorita Academemische Italiano Straniere", the Civil and Academic Authority for Foreigners from the Govt. of Italy, the Medallion of Honour from the Catholic University, Leuven, Belgium, the Golden Prize from CESMEO, the International Institute of Advanced Asian Studies, Torino, Italy and five Honorary Doctorates from Indian and foreign Universities. In the Citation for the Honorary Doctorate at the Silpakorn University, Bangkok, he was described as "a living legend in the field of Sanskrit."

ISBN : 978-81-89302-42-9

भारतीय विद्या मंदिर
12/1 नेली सेनगुप्ता सरणि
कोलकाता-700087

₹ 295